भारतीय अर्थव्यवस्था की स्थिति*

राकेश मोहन

इंडियन सिक्यूरिटीज़ इंफ्रास्ट्रक्चर एंड आपरेशन के दूसरे वार्षिक मंच 2006 के अवसर पर उपस्थित होते हुए मुझे बेहद प्रसन्नता है। भारतीय अर्थव्यवस्था की हाल के विकास की गति ने भारत की विकास संभावनाओं में नए सिरे से रुचि उत्पन्न की है। जैसा कि वार्षिक नीति की अर्धवार्षिक समीक्षा हाल ही में की गई है, मैंने भारतीय अर्थव्यवस्था की वर्तमान स्थिति की झलक प्रस्तुत करने के बजाय वर्तमान रुझान को बृहत्तर परिप्रेक्ष्य में रखने के बारे में सोचा। इस परिप्रेक्ष्य में दीर्घकालीन रुझान तथा वैश्विक परिदृश्य दोनों शामिल हैं। अतः मैं इस प्रकार आगे बढ़ूंगा :

- भारतीय अर्थव्यवस्था के भविष्य के लिए उचित संभावनाओं की रूपरेखा तैयार करने के लिए मैं सर्वप्रथम पिछले तीन दशकों में भारत की आर्थिक प्रगति की समीक्षा सामने रखूंगा।
- भारतीय अर्थव्यवस्था के समस्त विश्व के साथ बढ़ते एकीकरण को देखते हुए उसके बाद मैं वैश्विक अर्थव्यवस्था की संभावनाओं की चर्चा करूंगा।
- इसके बाद भारत में वर्तमान आर्थिक स्थिति का आकलन प्रस्तुत करूंगा।
- अंततः मैं कुछेक उन मुद्दों की चर्चा करूंगा जो वर्तमान विकास गति को और बढ़ाने के लिए आवश्यक है।

I. दीर्घकालीन रुझानों की समीक्षा

विकास, बचतें और निवेश

नब्बे के दशक के आरंभ में ढांचागत सुधार शुरू करने के बाद भारतीय अर्थव्यवस्था औसतन 6 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर पर बढ़ी है। हालांकि अस्सी के दशक में भी उच्च विकास दर (5.8 प्रतिशत प्रति वर्ष) देखी गई थी, यह वृद्धि समष्टि आर्थिक असंतुलनों - बढ़ते राजकोषीय घाटे, चालू खाते के बढ़ते घाटे, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष के गिरते स्तर और उच्च मुद्रास्फीति दर - के साथ जुड़ी थी जो 1990-91 के भुगतान संतुलन संकट के रूप में सामने आई। इसके विपरीत, 1992-93 और 2005-06 के बीच न केवल वृद्धि दर में बढ़ोतरी हुई, जो अस्सी के दशक के दौरान की 5.8 प्रतिशत की दर से बढ़कर उक्त अवधि में 6.4 प्रतिशत हो गई, बल्कि यह वृद्धि इस अवधि के दौरान रहे विशालकाल बहिर्जात संकटों (आंतरिक और बाह्य दोनों) के बावजूद समष्टि आर्थिक और वित्तीय स्थिरता के माहौल में हासिल की गई (सारणी 1)।

2005-06 को समाप्त तीन वर्ष की अवधि में वास्तविक जीडीपी वृद्धि औसतन 8 प्रतिशत प्रतिवर्ष से अधिक रही है। पिछले दो दशकों की तुलना में जनसंख्या वृद्धि में हुई तीव्र कमी के कारण प्रति व्यक्ति वास्तविक जीडीपी वृद्धि में अधिक प्रभावशाली वृद्धि दर्ज की गई है और यह अस्सी के दशक के दौरान रही 3.4 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से बढ़कर हाल के तीन वर्षों में लगभग 6.5 प्रतिशत प्रतिवर्ष हो गई है। वर्तमान वर्ष में अब तक हुए विकास संकेत करते हैं कि अर्थव्यवस्था 2006-07 में भी वर्तमान वृद्धि दर बनाए रखेगी।

आज भारतीय अर्थव्यवस्था चीन के बाद विश्व की दूसरी तीव्रगति से बढ़ रही अर्थव्यवस्था है। क्रय शक्ति समता (पीपीपी) के संदर्भ में भारत अमेरिका, चीन और जापान के बाद विश्व की चौथी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है। विश्व की जीडीपी (पीपीपी) में भारत का हिस्सा 1991 के 4.3 प्रतिशत से बढ़कर 2005 में लगभग 6.0 प्रतिशत हो गया है (चार्ट 1)।

अर्थव्यवस्था की वृद्धि दर में बढ़ोतरी को जीडीपी के 30 प्रतिशत से अधिक के घरेलू निवेश जिसका वित्तपोषण मुख्य रूप से घरेलू बचतों द्वारा किया गया, से मदद मिली है। नब्बे के दशक के दूसरे भाग में कुछ स्थिर रहने के बाद 2004-05 तक घरेलू बचतें बढ़कर जीडीपी के 29

सारणी 1: भारत की वास्तविक सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) वृद्धि

अवधि	औसत वार्षिक वृद्धि (%)	अंतर का गुणांक
1	2	3
1970s	2.9	1.42
1980s	5.8	0.39
1990s	5.8	0.32
2000-2006	6.4	0.32
ज्ञापन:		
1992-93 से 2005-06	6.4	0.24

* डॉ. राकेश मोहन, उप गवर्नर, भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा इंडियन सिक्यूरिटीज इंफ्रास्ट्रक्चर एंड आपरेशन के दूसरे वार्षिक मंच 2006 पर मुंबई में 7 नवंबर 2006 को दिया गया भाषण। यह भाषण 22 सितंबर 2006 के चौथे सी.आइ.आइ. नैशनल कौंसिल के कोलकाता के भाषण पर आधारित है। इस भाषण को तैयार करने में मुनीष कपूर से प्राप्त सहायता के लिए हम उनके आभारी हैं।

चार्ट 1: विश्व की जीडीपी में भारत का हिस्सा

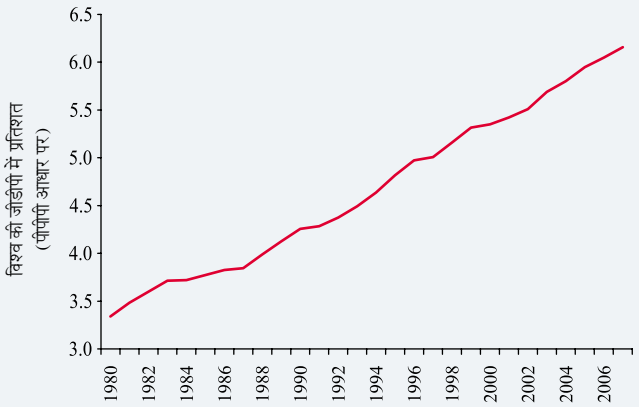

टिप्पणी : 2006 और 2007 के आंकड़े अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष के अनुमान हैं।
स्रोत : अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष।

प्रतिशत से अधिक हो गईं। हाल के वर्षों में समग्र बचतों में हुए सुधार को विशेष रूप से सरकारी क्षेत्र की बचतों में आए बदलाव से लाभ मिला है। 1998-99 और 2002-03 के बीच सरकारी प्रशासन की बचतों में तीव्र गिरावट के कारण नकारात्मक होने के बाद 2003-04 और इसके बाद से सरकारी क्षेत्र की बचतें पुनः सकारात्मक हुई जो मुख्यतया सतत आधार पर चल रहे राजकोषीय समेकन को परिलक्षित करती है। 2004-05 में सरकारी क्षेत्र की बचतों की दर 2.2 प्रतिशत थी लेकिन फिर भी यह 1976-77 में प्राप्त की गई लगभग पांच प्रतिशत की सवोच्च दर की आधी से भी कम थी। कारपोरेट की लाभप्रदता में हुए सुधार से भी हाल के वर्षों में घरेलू बचतों में वृद्धि हुई है। घरेलू बचतें देशी बचतों के प्रमुख घटक बनी रही और 2004-05 में यह समग्र देशी बचतों की लगभग तीन-चौथाई भाग के बराबर रहीं। निरंतर आधार पर तेज गति से विकास प्राप्त करने हेतु भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए समग्र बचतों में और अधिक सुधार करना आवश्यक है। इस संदर्भ में सरकारी क्षेत्र की बचतों को एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करनी होगी (सारणी 2)।

सारणी 2 : भारत में घरेलू बचतें

(जीडीपी का प्रतिशत)

अवधि/वर्ष	घरेलू क्षेत्र	निजी कार्पोरेट क्षेत्र	सरकारी क्षेत्र	कुल
1	2	3	4	5
1970s	12.2	1.6	3.7	17.5
1980s	14.6	1.8	3.0	19.4
1990s	18.5	3.7	1.0	23.2
2000-2005	22.4	4.2	-0.2	26.3
ज्ञापन:				
2004-05	22.0	4.8	2.2	29.1

मुद्रास्फीति

मुद्रास्फीति के मामले में उल्लेखनीय समष्टिगत उपलब्धि रही और इसमें (मुद्रास्फीति) नब्बे के दशक के मध्य से काफी गिरावट देखी गई है और यह सत्तर तथा अस्सी के दशक के दौरान रही लगभग 8 प्रतिशत प्रतिवर्ष की तुलना में लगभग 5 प्रतिशत प्रतिवर्ष के औसत पर रही (चार्ट 2)। मुद्रास्फीति प्रबंधन में सफलता मुख्य रूप से मौद्रिक नीति के अग्रसक्रिय कार्यों को परिलक्षित करती है। दूसरी ओर, यह सफलता समुन्नत मौद्रिक-राजकोषीय संबंध के कारण आसान हुई है। अर्थव्यवस्था के बढ़ते खुलेपन और अविनियमन के कारण उत्पन्न प्रतिस्पर्धी शक्तियों से भी घरेलू मूल्यों में वृद्धि को नियंत्रित रखने में मदद मिली है। समग्र रूप से, मूल्य स्थिरता को बनाए रखने से जुड़ी सफलता के कारण देश में निम्न और स्थिर मुद्रास्फीति अपेक्षाएं रहीं । जैसा कि विभिन्न देशों के अनुभव से पता चलता है, मुद्रास्फीति में वास्तविक हलचल का निर्धारण करने में मुद्रास्फीति अपेक्षाएं महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। भारत में मूल्य और वित्तीय स्थिरता बनाए रखने की सफलता ने अर्थव्यवस्था के मध्यकालीन विकास पथ में ढांचागत परिवर्तन की संभावनाओं को जन्म दिया है। हालांकि सत्तर तथा अस्सी के दशकों की तुलना में नब्बे के दशक के मध्य से वास्तव में भारत में मुद्रास्फीति काफी कम रही है, इस बात पर बल दिए जाने की आवश्यकता है कि भारत में मुद्रास्फीति प्रमुख विकसित अर्थव्यवस्थाओं में प्रचलित 2-3 प्रतिशत की मुद्रास्फीति से काफी अधिक स्तर पर बनी हुई है।

यह तथ्य बहुत रुचिकर है कि विगत में देश में मुद्रास्फीति तेल और अन्य जिंसों के उच्च मूल्यों के झटकों के बावजूद सापेक्ष रूप से अनुकूल बनी रही। इस संदर्भ में भारतीय अनुभव अन्य देशों के हाल के अनुभव के अनुरूप है। वैश्विक स्तर पर रहे हाल के तेल झटकों के दौर में मुद्रास्फीति पूर्व के तेल संकटों के कारण हुई मुद्रास्फीति की

चार्ट 2 : भारत में थोक मूल्य सूचकांक मुद्रास्फीति

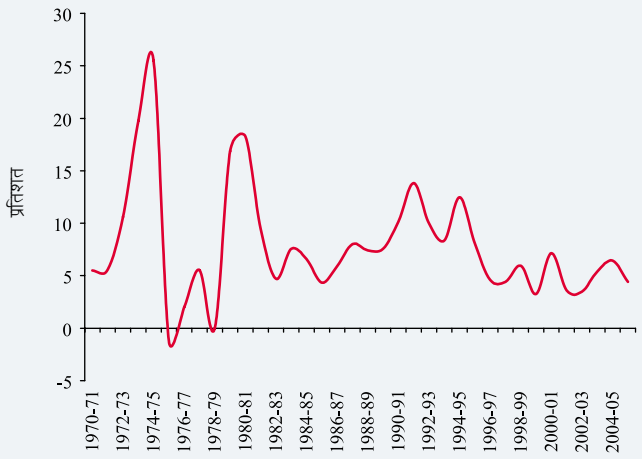

तुलना में सापेक्ष रूप से संतुलित बनी रही है। ऐसा कई घटकों के कारण संभव हुआ जिनमें तेल उपयोग की मात्रा में कमी, कुछ मामलों में अपूर्ण पासथ्रू, उच्चतर प्रतिस्पर्धा तथा अंततः मौद्रिक नीति को अग्रसक्रिय रूप से सख्त करने की दृष्टि में मुद्रास्फीति की स्थिर संभावनाएं शामिल हैं। इन मामलों पर आगे के भाग में विस्तृत रूप से चर्चा की गई है।

औद्योगिकी वृद्धि

2003-04 से आर्थिक गतिविधि की मजबूती स्वागतयोग्य विशेषता रही है देश में निर्माण गतिविधि का पुनरुत्थान (चार्ट 3 और 4)। नब्बे के दशक के मध्य में उच्च वृद्धि हासिल करने के बाद 2001-02 तक निर्माण क्षेत्र में प्रगति अवरुद्ध रही। तब से विनिर्माण में क्रमिक वृद्धि दर्ज की गई है तथा यह वृद्धि वर्तमान वर्ष में अभी तक बनी हुई है। निर्माण गतिविधि के पुनरुत्थान के बावजूद निर्माण गतिविधि में रोजगार वृद्धि कम है (सारणी 3)।

बैंक ऋण में वृद्धि

आर्थिक गतिविधि में सुधार, बैंक ऋण के लिए मांग में निरंतर वृद्धि के रूप में प्रतिबिम्बित होता है। बैंक ऋण मार्च 2000 के अंत में जीडीपी के 30 प्रतिशत के स्तर से बढ़कर मार्च, 2006 के अंत में 48 प्रतिशत के स्तर पर पहुंच गया (चार्ट 5)। अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों द्वारा प्रदत्त गैर-खाद्य ऋण में 2002-03 और 2005-06 के बीच औसतन वार्षिक रूप से 26.1 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई। यह वृद्धि पूर्व के चार वर्षों की अवधि (1998-99 से 2001-02) के दौरान दर्ज की गई 14.5 प्रतिशत की वृद्धि तथा 17.8 प्रतिशत के दीर्घकालीन औसत (1970-2006) से काफी अधिक है। नब्बे के दशक के अंत में ऋण प्रवाह में देखे गए प्रगतिरोध के आंशिक कारणों में वास्तविक ब्याज दरों में वृद्धि के कारण हुई मांग में कमी, कारोबार चक्र का नीचे की ओर रुख और उक्त अवधि के दौरान हुई महत्व पूर्ण व्यापार पुनर्संरचना शामिल है। आर्थिक गतिविधि के पुनरुत्थान

चार्ट 3 : भारत में औद्योगिक उत्पादन

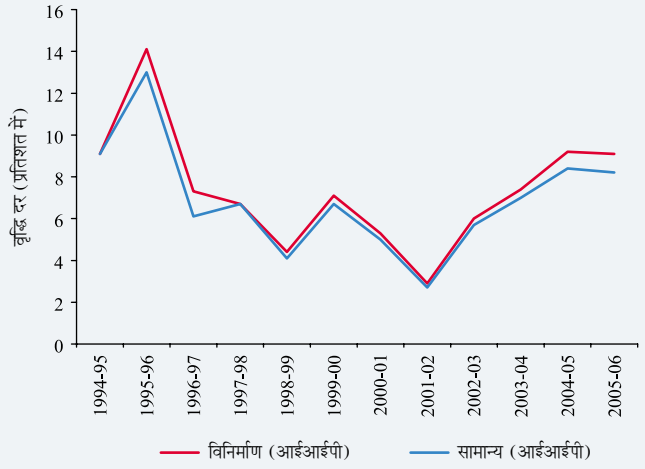

चार्ट 4 : उद्योग में वृद्धि : 2002-2005

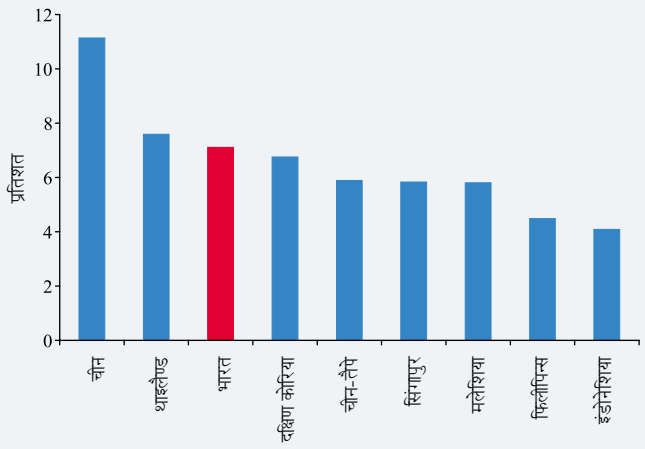

के अलावा हाल के वर्षों में बैंक ऋण में तीव्र वृद्धि अनेक घटकों जैसे कि निम्न आधार से वित्तीय मजबूती, आपूर्ति प्रत्यस्थता में हुआ ढांचागत परिवर्तन, ऋण बाजारों की बढ़ती कुशलता तथा कृषि एवं लघु उद्योग इकाइयों जैसे क्षेत्रों को ऋण देने में सुधार लाने के लिए की गई नीतिगत पहल के कारण हुई। यही नहीं, गृह निर्माण के लिए मांग से बढ़े खुदरा ऋण तथा अन्य खुदरा ऋण बैंक ऋण में वृद्धि के प्रमुख घटक के रूप में उभर रहे हैं। यह अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों द्वारा प्रदत्त समग्र ऋण में गृह निर्माण ऋणों के अंश में हुई तीव्र वृद्धि से परिलक्षित होता है जो मार्च 1990 के अंत के 2.4 प्रतिशत से बढ़कर मार्च 2005 के अंत में 11.0 प्रतिशत के स्तर पर पहुंच गया। खुदरा ऋण में वृद्धि क्रेडिट कार्डों के बढ़ते उपयोग, उपभोक्ता वस्तुओं के लिए ऋणों तथा शिक्षा ऋणों के लिए मांग से भी हुई है। कुल बैंक ऋण में गैर-गृह निर्माण खुदरा ऋण का

सारणी 3 : उद्योग में रोजगार

(कुल रोजगार का प्रतिशत)

देश/वर्ष	1980	2000
1	2	3
भारत	13.9	18.2
ब्राज़ील	24.7	19.3
चीन	18.2	23.0
इंडोनेशिया	13.2	17.3
दक्षिण कोरिया	29.0	28.0
मलेशिया	24.1	32.2
मेक्सिको	26.5	26.9
थाइलैण्ड	10.3	19.0
तुर्की	34.9	24.5

स्रोत : कल्पना कोचर, उत्सव कुमार, रघुराम रजन, अरविंद सुब्रमणियन और आयोनिस तोकटलिडिस (2006), ''इंडियाज पैटर्न आफ डेवलपमेंट : वाट हेपंड, वाट फोलोव्स?'' जर्नल आफ मोनेट्री इकनामिक्स, वाल्यूम 53.

चार्ट 5 : ऋण और जीडीपी अनुपात

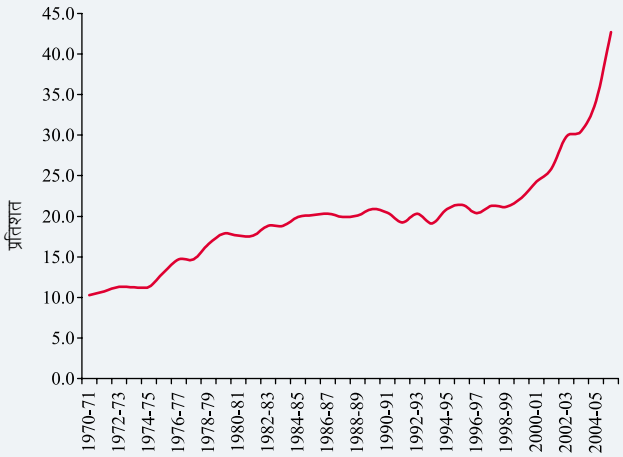

चार्ट 7 : कृषि और उद्योग को ऋण

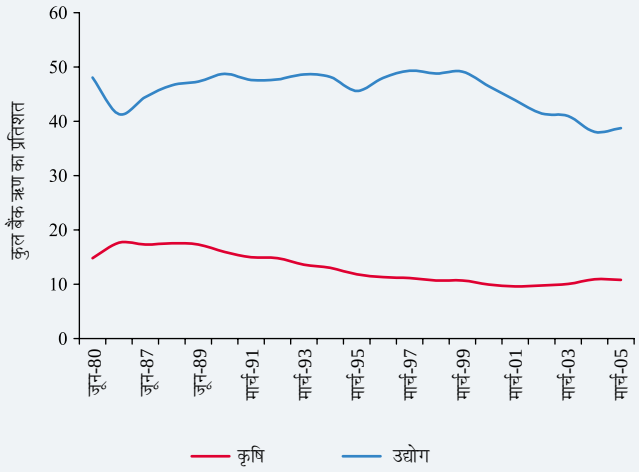

हिस्सा मार्च 1990 के अंत के चार प्रतिशत से बढ़कर मार्च 2005 के अंत में लगभग 11 प्रतिशत के स्तर पर पहुंच गया। इस प्रकार, बैंक ऋण में कुल खुदरा ऋण का हिस्सा पिछले 15 वर्षों में 6.4 प्रतिशत से बढ़कर 22 प्रतिशत से अधिक हो गया है (चार्ट 6)। इन रुझानों के परिणामस्वरूप कुल ऋण में उद्योग के हिस्से में नब्बे के दशक के अंत से गिरावट हो रही है (चार्ट 7)।

बाह्य क्षेत्र

पिछले 15 वर्षों में बाह्य क्षेत्र में नाटकीय परिवर्तन देखा गया। भारतीय अर्थव्यवस्था का विश्व की अन्य अर्थव्यवस्थाओं के साथ एकीकरण बढ़ रहा है। नब्बे के दशक के आरंभ तक की अवधि के

चार्ट 6 : खुदरा ऋण

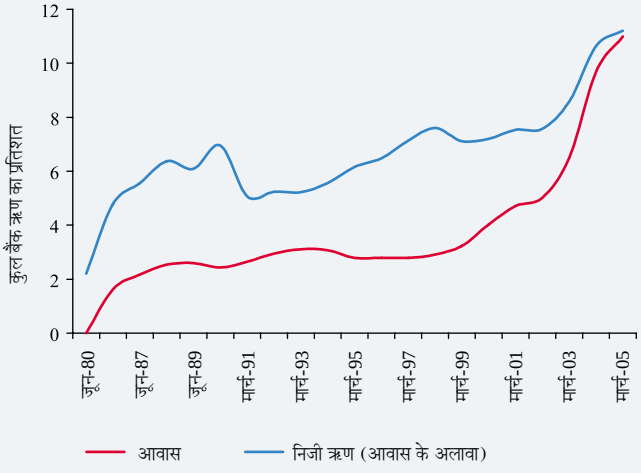

दौरान बाह्य क्षेत्र के संबंध में अनुभव किए गए सतत दबाव के विपरीत तब से भुगतान संतुलन की स्थिति सुकर बनी हुई है। बाह्य क्षेत्र की ताकत के सार संकेत भारतीय विदेशी मुद्रा आस्तियों से ज्ञात होते हैं जो अभी लगभग 160 बिलियन अमेरिकी डालर (यथा अक्तूबर 27, 2006) के स्तर पर हैं जबकि जून 1991 में यह मात्र 1 बिलियन अमेरिकी डालर थीं। यह महत्वपूर्ण सुधार बाह्य क्षेत्र से संबंधित कई नीतियों के कारण हो सका है। इनमें शामिल हैं : शुल्क और गैर-शुल्क प्रतिबंधों में कमी, चालू खाते की परिवर्तनीयता, पूंजी खाते के उदारीकरण के प्रति विवेकपूर्ण दृष्टिकोण, विदेशी निवेश प्रवाह - विशेष रूप से प्रत्यक्ष विदेशी निवेश प्रवाह - के लिए प्राथमिकता, ऋण प्रवाह पर लागू किये गये नियंत्रण और बाजार आधारित विदेशी विनिमय दर प्रणाली। इन नीतियों से एक ओर जहां विदेशी बाजारों तक पहुंच में वृद्धि हुई है, वहीं दूसरी ओर इनसे उत्पादकता लाभ को बढ़ावा मिला है और वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित हुई है। यह वस्तुओं के निर्यात, विशेष रूप से सेवाओं के निर्यात और विप्रेषण में आई सुदृढ़ वृद्धि से प्रतिबिम्बित होता है। परिणामस्वरूप, चालू खाते के घाटे को संतुलित स्तर - 1991-92 से जीडीपी का औसतन मात्र 0.5 प्रतिशत (जबकि अस्सी के दशक के दौरान यह घाटा जीडीपी का 1.8 प्रतिशत था) पर बनाए रखते हुए भी राष्ट्र अपनी बढ़ती आयात मांगों का वित्त पोषण करने में सक्षम रहा है (चार्ट 8 और 9)।

सेवा प्राप्तियों में वृद्धि साफ्टवेयर निर्यातों तथा अन्य प्रोफेशनल एवं व्यापारिक सेवाओं में हुए महत्वपूर्ण विस्तार के कारण हुई है। नब्बे के दशक के शुरू से सतत वृद्धि को परिलक्षित करते हुए सकल अदृश्य प्राप्तियों (अर्थात् सेवाओं, अंतरण और आय को शामिल करते हुए) में तीव्र वृद्धि हुई है और यह 1990-91 में जीडीपी के 2.4 प्रतिशत के स्तर से बढ़कर 2005-06 में 11.5 प्रतिशत हो गईं। अतः उक्त वृद्धि ने

चार्ट 8 : विदेशी मुद्रा भण्डार का आयातों पर कवर

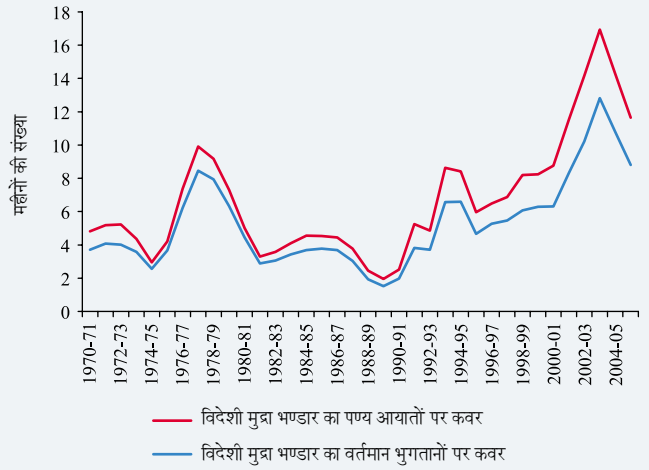

वस्तुओं के निर्यात में हुई वृद्धि (इसी अवधि में निर्यात जीडीपी के 5.8 प्रतिशत से बढ़कर 13.1 प्रतिशत हो गए हैं) को भी पीछे छोड़ दिया है। इसके कारण चालू प्राप्तियों (निर्यातों और अदृश्य निर्यातों) के हिस्से में वृद्धि हुई है और यह 1990-91 के 29 प्रतिशत से बढ़कर 2005-06 में 47 प्रतिशत हो गया (सारणी 4)। परिणामस्वरूप चालू प्राप्तियों और जीडीपी के बीच अनुपात 1990-91 के 8.2 प्रतिशत से लगभग तीन गुना बढ़कर 2005-06 में 24.5 प्रतिशत हो गया। भारत के सेवा निर्यातों में सतत तेजी को परिलक्षित करते हुए, विश्व के निर्यातों में भारत के सेवा निर्यातों का हिस्सा तीन गुना बढ़कर 2004 में 1.8 प्रतिशत हो गया जो एक दशक पहले 1995 में 0.6 प्रतिशत था (चार्ट 10)। 2004 में भारत विश्व का 18वां सबसे बड़ा सेवा निर्यातक था। सेवा निर्यात में दर्ज वृद्धि वस्तुओं के निर्यातों में दर्ज वृद्धि से काफी अधिक है।

चार्ट 9 : चालू खाते का घाटा

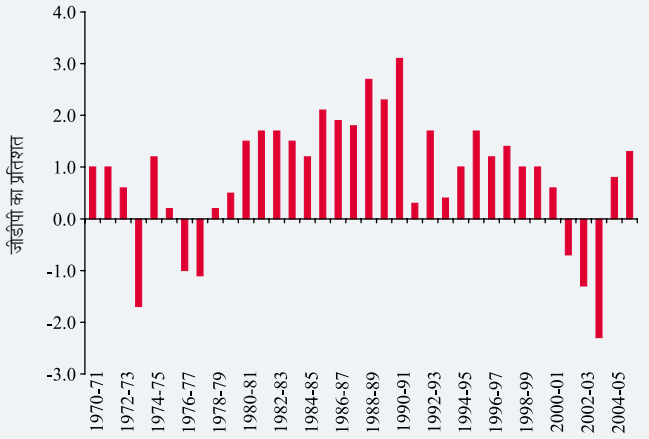

टिप्पणी : (-) अधिशेष दर्शाते हैं।

सारणी 4 : भारत की अदृश्य प्राप्तियां

(बिलियन अमेरिकी डालर)

वर्ष	सेवाएं	अंतरण	आय	अदृश्य प्राप्तियां/ चालू प्राप्तियां (प्रतिशत)
1	2	3	4	5
1990-91	4.6	2.5	0.4	29
1995-96	7.3	8.9	1.4	35
2000-01	16.3	13.3	2.7	42
2001-02	17.1	16.2	3.4	45
2002-03	20.8	17.6	3.5	44
2003-04	26.9	22.7	3.9	45
2004-05	46.0	21.3	4.5	47
2005-06	60.6	25.2	5.7	47

चार्ट 10 : भारत द्वारा सेवाओं और वस्तुओं का निर्यात

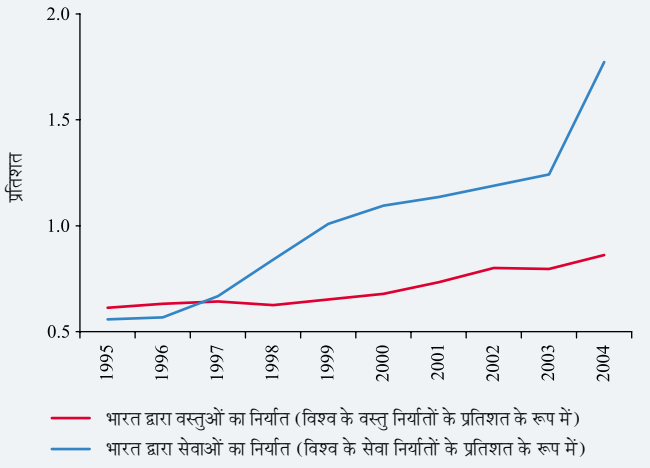

विदेशी निवेश नब्बे के दशक के शुरू के नाममात्र स्तर से बढ़कर 2005-06 तक जीडीपी के 2.5 प्रतिशत के स्तर पर पहुंच गए (चार्ट 11)। प्रत्यक्ष और पोर्टफोलियो दोनों निवेश में काफी वृद्धि दर्ज की गई है। यद्यपि प्रत्यक्ष निवेश के तहत प्राप्त राशि अन्य प्राप्तकर्ता देशों की तुलना में सापेक्ष रूप से कम रही तथापि, भारत में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश प्रवाह का आकार विश्व की अनेक अग्रणी मल्टीनेशनल कंपनियों द्वारा दर्शाई जा रही बढ़ती रुचि के कारण बढ़ रहा है। भारत ने 2002 के अपने 15वे स्थान को सुधार कर 2005 में चीन के बाद दूसरे राष्ट्र के रूप में कर लिया है जो प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के लिए पसंदीदा गंतव्य है। 2005-06 में भारत द्वारा प्राप्त शुद्ध पूंजी प्रवाह 25 बिलियन अमेरिकी डालर रहा, सकल पूंजी अंतर्प्रवाह और बाह्य प्रवाह उच्चतर स्तर पर क्रमशः 139 बिलियन अमेरिकी डालर और 115 बिलियन अमेरिकी डालर रहे जो भारतीय अर्थव्यवस्था के बढ़ते खुलेपन और इसके वैश्विक अर्थव्यवस्था के साथ

चार्ट 11 : भारत में विदेशी निवेश

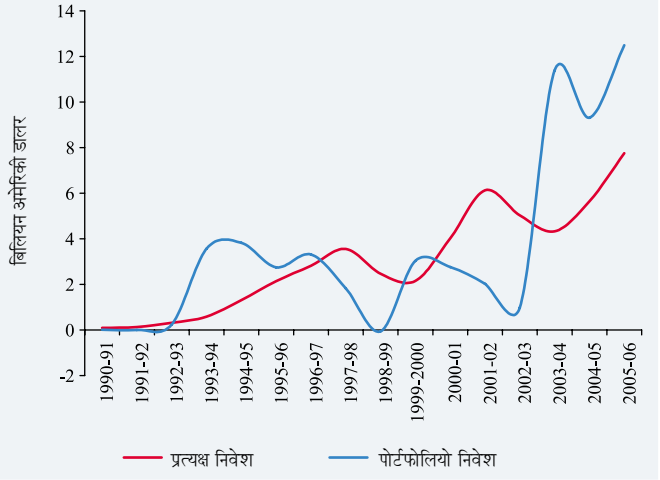

चार्ट 12 : मिश्रित राजकोषीय घाटा

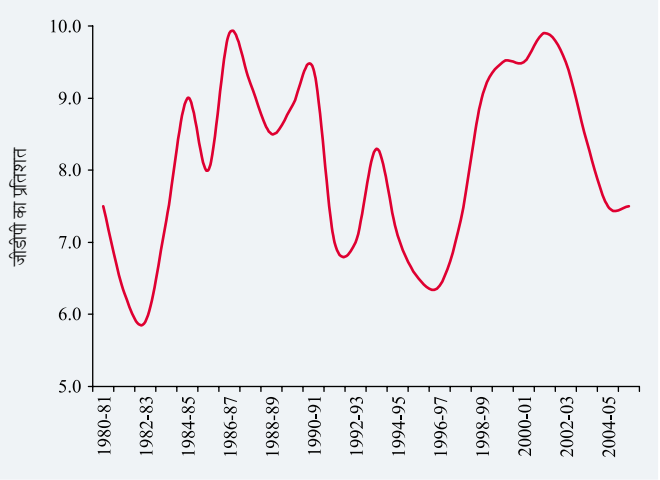

बढ़ते एकीकरण की ओर संकेत करते हैं। परिणामस्वरूप, वैश्विक आर्थिक गतिविधियों का भारतीय अर्थव्यवस्था पर अब तक की तुलना में और अधिक प्रभाव पड़ने की संभावना है। 1990 के शुरू से उन नीतियों का अनुसरण किया गया है जो प्रतिकूल प्रभाव को कम करते हुए बढ़ते खुलेपन का लाभ उठाए तथा इनसे देश को अब तक काफी फायदा हुआ है। वास्तव में आज भारत न केवल प्रत्यक्ष विदेशी निवेश प्राप्त कर रहा है बल्कि भारतीय कंपनियां वैश्विक बाजार में उपलब्ध अवसरों का लाभ उठाने के लिए विदेशों में बढ़-चढ़ कर निवेश कर रही हैं। 2005-06 में बाह्य प्रत्यक्ष विदेशी निवेश 2.7 बिलियन अमेरिकी डालर के स्तर पर रहा तथा विदेशों में किया गया संचयी प्रत्यक्ष विदेशी निवेश मार्च 2006 के अंत में 12 बिलियन अमेरिकी डालर होने का अनुमान है।

लोक वित्त

सुधारों की अवधि में लोक वित्त में रुझान मिलाजुला रहा। 1996-97 तक कुछ सुधार दर्ज करने के बाद लोक वित्त में गिरावट देखी गई जो आर्थिक गतिविधि में चक्रीय गिरावट के अनुरूप कर राजस्व में हुई कमी (जीडीपी के प्रतिशत के रूप में) और पांचवे वित्त आयोग के निर्णय के प्रभावों जैसे कई घटकों को परिलक्षित करती है। वास्तव में, केंद्र और राज्यों का संचयी राजस्व घाटा 1990-91 की तुलना में 2001-02 में अधिक था (चार्ट 12)। 2002-03 और इसके बाद से लोक वित्त में काफी सुधार देखा गया है जो वित्तीय समेकन की ओर किए गए नीतिगत प्रयासों और आर्थिक गतिविधियों में आए बदलाव दोनों को परिलक्षित करता है। हाल ही में हुए इस सुधार के बावजूद संचयी लोक ऋण अधिक स्तर (जीडीपी का लगभग 79 प्रतिशत) पर बना हुआ है। इसके अलावा पूंजीगत व्यय कम स्तर पर है (सारणी 5) और हाल ही में हुए सुधार के बावजूद कर-जीडीपी अनुपात भी कम स्तर पर है (सारणी 6 और चार्ट 13)।

वित्तीय क्षेत्र

एक नपी-तुली, क्रमिक, सतर्क और निरंतर प्रक्रिया के माध्यम से भारत में वित्तीय प्रणाली में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं। सही समय पर और सामूहिक नीतिगत उपायों, जिनका लक्ष्य भारतीय वित्तीय क्षेत्र को एक अधिक प्रतिस्पर्धी, कुशल और स्थिर वित्तीय क्षेत्र बनाना था, के माध्यम से इसे तर्कसंगत रूप से एक परिष्कृत, विविध और लचीली प्रणाली के रूप में बदल दिया गया है। यह उल्लेखनीय है कि एशियाई संकट, परमाणु विस्फोट के बाद लगाए गए प्रतिबंधों, तेल मूल्यों का तेजी से बढ़कर रिकार्ड स्तर पर पहुंचना, शेयर बाजार में हुई भारी गिरावट जैसे बहिर्जात कई संकटों के बावजूद वित्तीय स्थिरता को बनाए रखा गया है। बैंकिंग क्षेत्र की आस्ति गुणवत्ता में काफी सुधार आया है : शुद्ध अग्रिमों में शुद्ध अनर्जक आस्तियों का अनुपात विवेकपूर्ण मानदंडों को सख्त बनाए जाने के बावजूद मार्च 1997 के अंत में रहे 8.1 प्रतिशत से गिरकर मार्च 2006 के अंत में 2.0 प्रतिशत के स्तर पर पहुंच गया है। जैसा कि कुल बैंकिंग आस्तियों में निजी क्षेत्र के बैंकों के बढ़ते हिस्से से पता चलता है, बैंकिंग क्षेत्र में काफी प्रतिस्पर्धा है। समग्र रूप से बैंकिंग क्षेत्र का कुल पूंजी

सारणी 5 : केंद्रीय सरकार का खर्च

(जीडीपी का प्रतिशत)

वर्ष	राजस्व खर्च	पूंजीगत परिव्यय
1	2	3
1970-71	6.9	2.1
1980-81	10.0	2.1
1990-91	12.9	2.1
1995-96	11.8	1.2
2000-01	13.2	1.2
2005-06 संअ	12.5	1.6
2006-07 बअ	12.4	1.7

सारणी 6 : केंद्र का सकल कर राजस्व

(जीडीपी का प्रतिशत)

वर्ष	प्रत्यक्ष कर	अप्रत्यक्ष कर	कुल
1	2	3	4
1990-91	1.9	8.2	10.1
1991-92	2.3	8	10.3
1992-93	2.4	7.5	10
1993-94	2.4	6.5	8.8
1994-95	2.7	6.5	9.1
1995-96	2.8	6.5	9.4
1996-97	2.8	6.6	9.4
1997-98	3.2	6.0	9.1
1998-99	2.7	5.6	8.3
1999-2000	3.0	5.8	8.8
2000-01	3.2	5.7	8.9
2001-02	3.0	5.2	8.2
2002-03	3.4	5.4	8.8
2003-04	3.8	5.4	9.2
2004-05	4.2	5.5	9.8
2005-06 (संअ)	4.8	5.7	10.5
2006-07 (बअ)	5.3	5.9	11.2

संअ : संशोधित अनुमान. बअ : बजट अनुमान.

पर्याप्तता अनुपात मार्च 1997 के अंत के 10.4 प्रतिशत से बढ़कर मार्च 2006 के अंत में 12.8 प्रतिशत के स्तर पर पहुंच गया। अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों का परिचालनात्मक व्यय 1992 में कुल आस्तियों के 2.1 प्रतिशत से गिरकर 2004 में 1.8 प्रतिशत हो गया जो दक्षता में वृद्धि का सूचक है। बैंकों की मध्यस्थता लागत 1995-96 के 2.9 प्रतिशत से गिरकर 2005-06 में 2.1 प्रतिशत हो गई। अब वित्तीय प्रणाली सुदृढ़ाऔर लचीली है तथा यह स्थिरता के माहौल में बढ़ी हुई आर्थिक वृद्धि के लिए प्रेरक है (चार्ट 14-17)।

चार्ट 14 : आस्ति गुणवत्ता

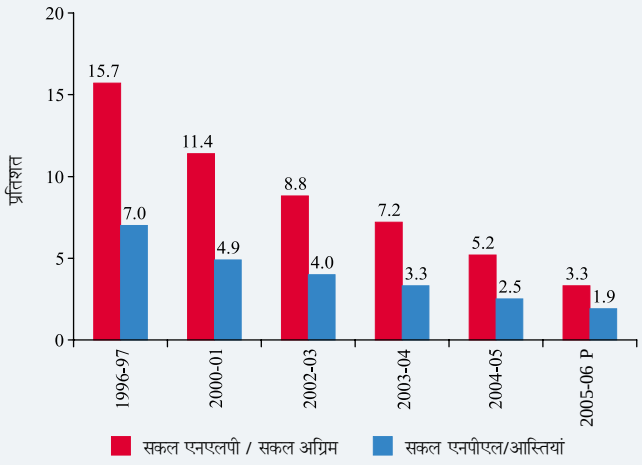

चार्ट 15 : आस्तियों में हिस्सा

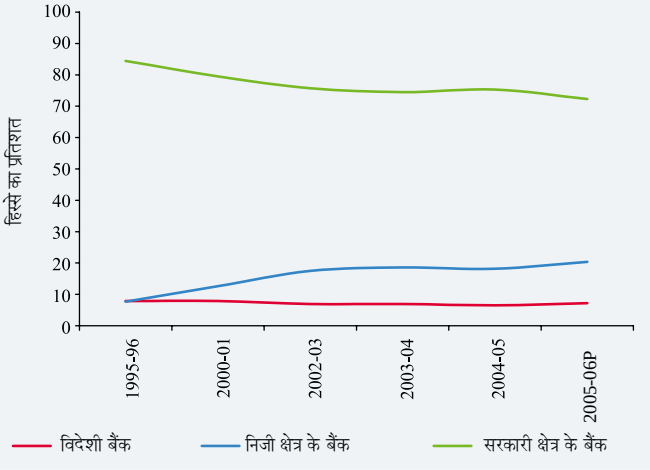

चार्ट 13 : राज्य सरकारों की कर प्राप्तियां

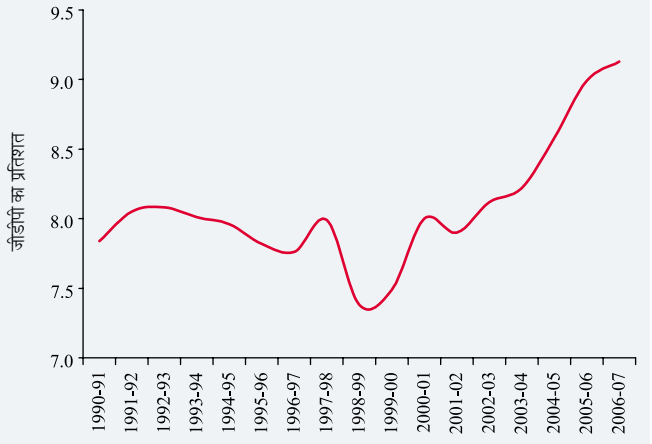

चार्ट 16 : अनुसूचित वाणिज्यि बैंकों का सीआरएआर

(मार्च की समाप्ति पर)

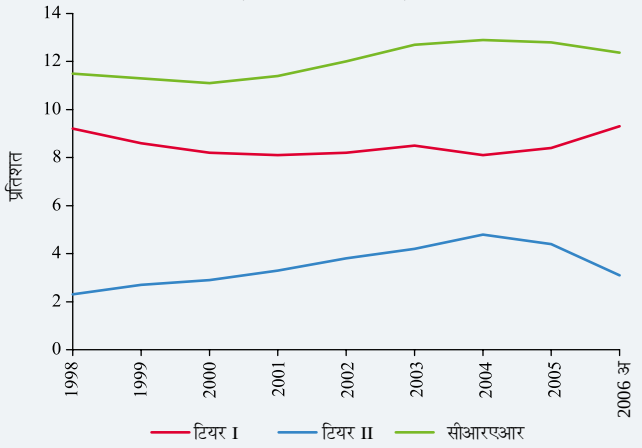

चार्ट 17 : मध्यस्थता लागत

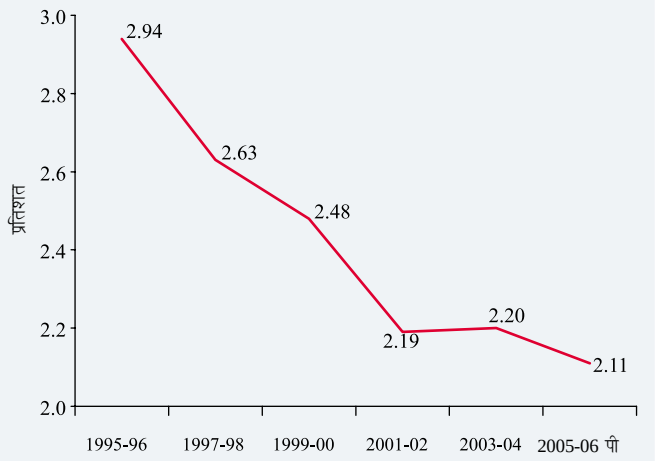

चार्ट 18 : वैश्विक वास्तविक जीडीपी वृद्धि : वार्षिक

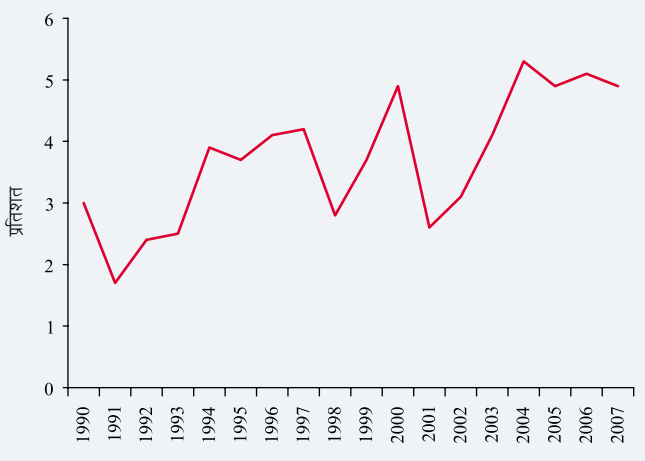

II. विश्व आर्थिक स्थिति

जैसा कि पूर्व में कहा गया है, 1990-91 से 2005-06 के दौरान भारतीय अर्थव्यवस्था के खुलेपन में लगभग तीन गुना वृद्धि हुई है। इस प्रकार अब भारतीय अर्थव्यवस्था वैश्विक अर्थव्यवस्था के साथ ज्यादा एकीकृत है। अतः घरेलू अर्थव्यवस्था की संभावनाओं का आकलन करने के लिए वैश्विक अर्थव्यवस्था की संभावनाओं की समीक्षा करना तर्कसंगत होगा।

अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष द्वारा अपने विश्व आर्थिक परिदृश्य (सितंबर 2006) में किए गए नवीनतम आकलन के अनुसार 2006 में वैश्विक अर्थव्यवस्था के 5.1 प्रतिशत की बढ़ी हुई वृद्धि दर (क्रय शक्ति समता के आधार पर विनिमय दरों का प्रयोग करते हुए) दर्ज करने की संभावना है जो 2005 की 4.9 प्रतिशत की वृद्धि दर से अधिक है। तेल के उच्च रिकार्ड मूल्यों तथा गैर-जिंसों के बढ़े हुए मूल्यों से उत्पन्न लगातार झंझावातों के बावजूद एक सुदृढ़, सुझान से अधिक वृद्धि का यह लगातार चौथा वर्ष है। 2003 और 2006 के बीच वैश्विक वृद्धि दर के औसतन 4.9 प्रतिशत प्रति वर्ष पर रहने की संभावना है जो 1996 और 2000 के बीच दर्ज 3.9 प्रतिशत तथा 1991 और 1995 के बीच दर्ज 2.8 प्रतिशत की वृद्धि दर से काफी अधिक है। जिंसों के उच्चतर मूल्यों के झंझावातों के प्रभाव को विश्व भर, विकसित और उभरती दोनों प्रकार की अर्थव्यवस्थाओं में वैश्विकरण की शक्तियों, आईसीटी क्रांति, वैश्विक आपूर्ति श्रृंखला के निर्माण, वित्तीय बाजारों की महत्ती दक्षता तथा बेहतर मैक्रोइकानमिक नीतियों के कारण हासिल उत्पादकता लाभों द्वारा शांत किया गया। वैश्विक वृद्धि में अमेरिका और उभरती अर्थव्यवस्थाओं अर्थात चीन और भारत का योगदान रहा। सकारात्मक पहलु यह है कि यूरो क्षेत्र में बढ़ती तेजी के साथ-साथ जापान में सतत विस्तार के कारण वैश्विक आर्थिक गतिविधि अब और ज्यादा संतुलित हो रही है। दूसरी ओर, अमेरिका में आर्थिक गतिविधियों की गति मुख्य रूप से ठंडे पड़े गृहनिर्माण बाजार के कारण कम रही है। 2007 में वैश्विक आर्थिक वृद्धि के हाल ही में दर्ज रुझान से अधिक वृद्धि दर से बराबर रहने की संभावना है। अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष ने 2007 में 4.9 प्रतिशत वृद्धि (क्रय शक्ति समता आधार पर) का अनुमान लगाया है (चार्ट 18 एवं 19)। इसी बीच, विश्व व्यापार में वृद्धि में तेजी बनी रही। 2004 और 2005 के दौरान आकार के मामले में वस्तुओं और सेवाओं में विश्व व्यापार औसतन 9 प्रतिशत प्रतिवर्ष रहा तथा 2006 में इसमें और 9 प्रतिशत की वृद्धि का अनुमान है।

हालांकि वैश्विक तेजी में सुदृढ़ता बनी रही, इसके कई अधोमुखी जोखिमों का सामना करना पड़ा। इनमें से एक जोखिम तेल के उच्च मूल्यों और जिंस मुद्रास्फीति से उत्पन्न हुआ है। विश्व स्तर पर, तेल के उच्चतर मूल्यों तथा अन्य जिंसों के बढ़े मूल्यों को दर्शाते हुए मुद्रास्फीति में वृद्धि हुई है। लेकिन आश्चर्यजनक रूप से तेल के पिछले झटकों की तुलना में

चार्ट 19 : वैश्विक वास्तविक जीडीपी वृद्धि : तिमाही

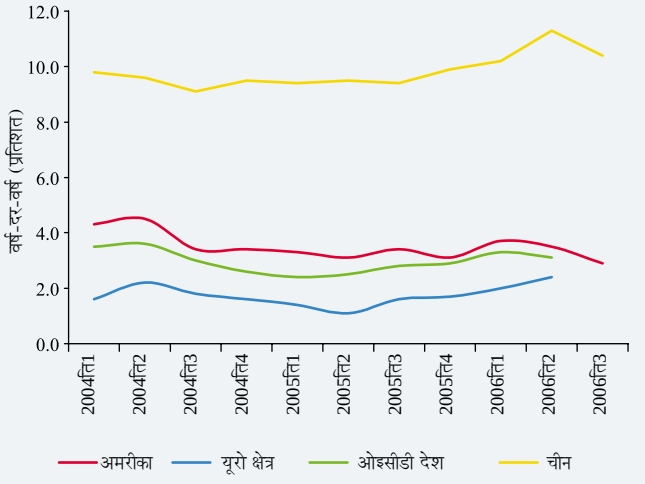

चार्ट 20 : अंतरराष्ट्रीय जिंस मूल्य

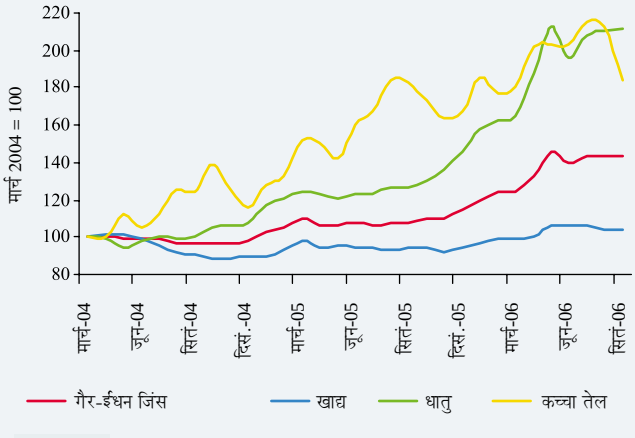

स्रोत : अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष

इस बार प्रभाव सापेक्ष रूप से कम रहा। यह भी महत्वपूर्ण है कि 2003 और इसके बाद से अनेक देशों में वास्तविक ब्याज दर का स्तर बहुत कम है तथा मौद्रिक एवं ऋण एग्रीग्रेट्स रुझान से अधिक वृद्धि दर्ज कर रहे हैं। फिर भी, तेल तथा अन्य जिंसों के तेजी से बढ़ते मूल्यों को देखते हुए, उपभोक्ता मूल्य मुद्रास्फीति सापेक्ष रूप से संतुलित रही है (चार्ट 20 और 21)। इस प्रक्रिया को उचित रूप से 'ग्रेट लिक्विडिटि एक्सपेंसन पज़ल' के रूप में वर्णित किया गया है।

तेल और अन्य जिंसों के उच्चतर मूल्यों और भरपूर चलनिधि के बावजूद उपभोक्ता मूल्य मुद्रास्फीति के सापेक्ष रूप से कम रहने की कहानी कई घटक बयान करते हैं। व्यापार के निम्न प्रतिबंध, बढ़ता अविनियमन, नवोन्मेष तथा पूरे विश्व भर में सृजित वैश्विक आपूर्ति श्रृंखला से प्राप्त प्रतिस्पर्धा और दक्षता लाभों ने मुद्रास्फीति दबावों को नियंत्रित रखने में मदद की है। व्यापारयोग्य वस्तुओं के तेजी से विस्तार के कारण घरेलू अर्थव्यवस्थाएं अंतरराष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा और तुलनात्मक लाभ के तथ्यों से अधिक प्रभावित हो रही हैं जिससे अनपेक्षित रूप से मूल्यों में वृद्धि किए जाने की संभावनाएं कम हुई हैं। कई क्षेत्रों में उत्पादकता में वृद्धि, जो आंशिक रूप से सूचना प्रौद्योगिकी निवेशों और पुनर्संरचना के कारण हुई हैं, से भी उच्च लागत को खपाने में मदद मिली है। तेल के प्रयोग की सघनता में कमी और अनेक उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के मामले में तेल मूल्यों के अधूरे प्रभाव से भी सुर्खियों में रहने वाली मुद्रास्फीति को नियंत्रित करने में मदद मिली है। अंततः मौद्रिक नीति रूपरेखा में परिवर्तन, जैसे कि मूल्य स्थिरता पर ध्यान केंद्रित करने के साथ मुद्रास्फीति को लक्ष्यित करने की व्यवस्थाओं तथा केंद्रीय बैंक की बढ़ी हुई विश्वसनीयता, का मुद्रास्फीति अपेक्षाओं को मुख्य रूप से स्थिर तथा निम्न स्तरों पर कायम रखने में सहयोग रहा है।

इसके बावजूद, तेल और अन्य जिंसों के मूल्यों में विगत में हुई बढ़ोतरी के संचयी प्रभाव के कारण अनेक अर्थव्यवस्थाओं में सुर्खियों में रहने वाली (हेडलाइन) मुद्रास्फीति अपने संबंधित लक्ष्यों से मामूली रूप से अधिक रही। अतः मुद्रास्फीति अपेक्षाओं को स्थिर रखने, विशेष रूप से तब जब अनेक अर्थव्यवस्थाओं में मांग स्थितियां मजबूत हैं तथा उत्पाद अंतर कम हो रहे हैं, के लिए केंद्रीय बैंक अपनी मौद्रिक नीतियों को कठोर बना रहे हैं (चार्ट 22)। हालांकि अमरीका में फेडरल रिज़र्व द्वारा जून 2004 और जून 2006 के बीच लगातार 17 अवसरों पर , प्रत्येक अवसर पर 25 आधार बिंदुओं की वृद्धि की गई वृद्धि रोक दी गई है, इसने संकेत दिया है कि और आगे बढ़ोतरी आगामी सूचना पर निर्भर करेगी। ऐसी प्रत्याशा है कि अपनी पिछली बैठक में की गई रुकावट के बावजूद यूरोपियन सेंट्रल बैंक दरों में वृद्धि जारी रखेगा। इस प्रकार वैश्विक ब्याज दरों के जो 2002-03 के दौरान काफी कम हो गई थीं, अल्पावधि में तुलनात्मक रूप से उच्चतर स्तर पर बने रहने की संभावना है। यद्यपि हाल के सप्ताहों में अंतरराष्ट्रीय कच्चे तेल के मूल्य कम होकर 60

चार्ट 21 : हेडलाइन उपभोक्ता मूल्य सूचकांक मुद्रास्फीति

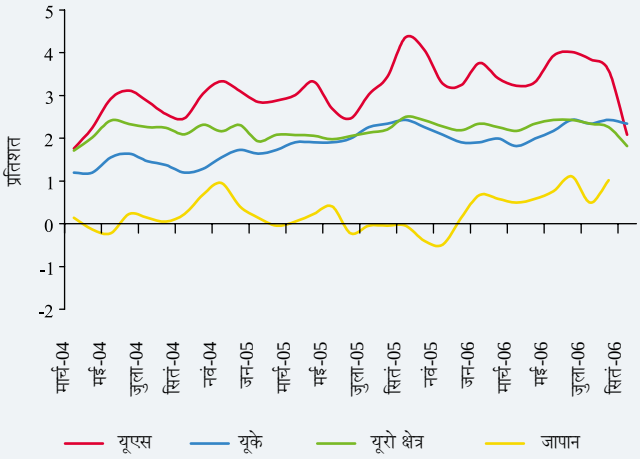

चार्ट 22 : केंद्रीय बैंक की नीति दर

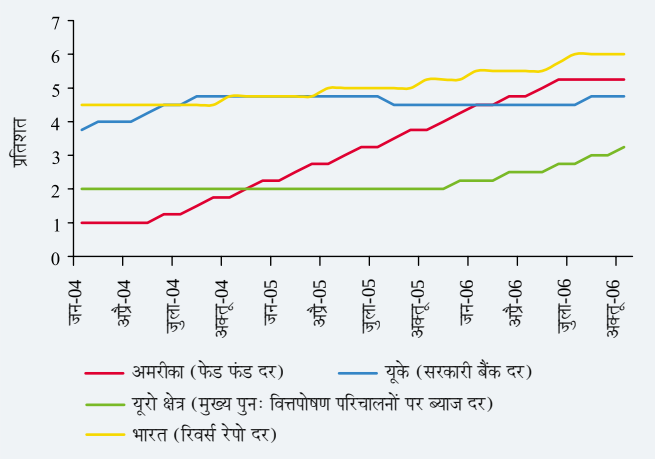

अमेरिकी डालर प्रति बैरल से काफी नीचे हो गए हैं, फिर भी ये मूल्य काफी अधिक हैं तथा इसके अलावा भावी संभावनाए भी अनिश्चित हैं। इसके अलावा, यद्यपि सितंबर 2006 के दौरान प्रमुख विकसित अर्थव्यवस्थाओं में हेडलाइन मुद्रास्फीति काफी संतुलित हुई हैं, कोर मुद्रास्फीति का स्थिर रहना जारी है।

संक्षेप में, वैश्विक स्तर पर आपूर्ति झटकों के बावजूद उत्पाद वृद्धि तथा उपभोक्ता मूल्य मुद्रास्फीति दोनों तुलनात्मक रूप से और अधिक स्थिर हैं। दूसरी ओर, जिंसों के मूल्य, विनिमय दरें और अन्य आस्तियों के मूल्यों में बहुत अधिक उतार-चढ़ाव रहा। जब मुद्रास्फीति और ब्याज दरें कम होती हैं, जैसा कि अभी है, मुद्रास्फीति अपेक्षाओं या ब्याज दर अपेक्षाओं में मामूली परिवर्तन के कारण जोखिमों का पुनर्मूल्यांकन करना पड़ता है जिसका प्रभाव काफी विशाल हो सकता है। इसके परिणामस्वरूप किए जाने वाले जोखिमों के पुनर्मूल्यांकन के कारण आस्तियों के मूल्यों में और अधिक उतार-चढ़ाव हो सकते हैं जैसा कि मई-जून 2006 के दौरान देखा गया था।

III. वर्तमान आर्थिक स्थिति : भारत

बाहरी संभावनाओं की पृष्ठभूमि में, 2006-07 के दौरान अब तक हुए विकास के आधार पर वर्ष 2006-07 के लिए भारतीय अर्थव्यवस्था का आकलन करना उपयोगी होगा। विकास की समीक्षा से पता चलता है कि भारतीय अर्थव्यवस्था पिछले तीन वर्षों के दौरान दर्ज वृद्धि दर को प्राप्त करने के पथ पर है (सारणी 7)।

कृषि

सामान्य मानसून रहने की स्थितियों के अंतर्गत कृषि में वृद्धि के रुझान को मानते हुए तथा घरेलू या बाहरी झटकों को छोड़कर, रिज़र्व बैंक ने 2006-07 (अप्रैल 2006) के लिए अपने वार्षिक नीति वक्तव्य में नीतिगत प्रयोजनों हेतु 2006-07 के दौरान वास्तविक जीडीपी वृद्धि दर के 7.5 - 8.0 प्रतिशत के दायरे में रहने का अनुमान लगाया था। रिज़र्व बैंक ने मौद्रिक नीति पर वार्षिक वक्तव्य की जुलाई 2006 में की गई पहली तिमाही समीक्षा में अपने जीडीपी वृद्धि अनुमान की पुनः पुष्टि की थी। रिज़र्व बैंक ने औद्योगिकी संभावना में सुधार तथा सेवाओं में वृद्धि की रफ्तार के बने रहने की संभावना के आधार पर अक्तूबर 2006 में की गई मध्यावधि समीक्षा में जीडीपी वृद्धि के अपने पूर्वानुमान को बढ़ाकर लगभग 8.0 प्रतिशत के स्तर पर संशोधित किया। अन्य एजेंसियों के अनुसार भी लगभग 8 प्रतिशत की वृद्धि अनुमानित है।

उद्योग और आधारभूत संरचना (इंफ्रास्ट्रक्चर)

विनिर्माण से प्रभावित होने के बाद, औद्योगिकी क्षेत्र 2006-07 में अपने पांचवे विस्तार वर्ष में प्रवेश कर रहा है। चालू वित्तीय वर्ष के दौरान अब तक विनिर्माण गतिविधियों में अपेक्षाओं से ज्यादा तेजी रही है। औद्योगिकी उत्पादन सूचकांक में रही हलचलों के आधार पर विनिर्माण गतिविधि में अप्रैल-अगस्त 2006 के दौरान 11.8 प्रतिशत की वृद्धि हुई जबकि 2005 की तदनुरुपी अवधि के दौरान यह 9.6 प्रतिशत थी। उपयोग आधारित वर्गीकरण के अनुसार उपभोक्ता नॉन-ड्यूरेबल्स को छोड़कर सभी क्षेत्रों में वृद्धि देखी गई। उल्लेखनीय है कि पूंजीगत सामान में उच्च आधार पर भी लगभग 19 प्रतिशत की वृद्धि हुई जो अर्थव्यवस्था में जारी सुदृढ़ निवेश गतिविधि को परिलक्षित करती है (सारणी 8)।

दूसरी ओर, अप्रैल-सितम्बर 2006 के दौरान छः ढांचागत उद्योगों में मात्र 7.3 प्रतिशत का संतुलित सुधार दर्ज किया गया जबकि 2005 की

सारणी 7 : भारत की वास्तविक जीडीपी वृद्धि

(प्रतिशत)

क्षेत्र	संपूर्ण वर्ष (आधार : 1999-2000)			(अप्रैल-जून)	
	2003-04	2004-05 (त्वअ)	2005-06 (संअ)	2005	2006
1	2	3	4	5	6
1 कृषि और संबद्ध गतिविधियां	**10.0**	**0.7**	**3.9**	**3.4**	**3.4**
2 उद्योग	**6.6**	**7.4**	**7.6**	**9.5**	**9.7**
2.1 माइनिंग एवं क्वेरिंग	5.3	5.8	0.9	3.1	3.4
2.2 विनिर्माण	7.1	8.1	9.0	10.7	11.3
2.3 विद्युत, गैस और जल आपूर्ति	4.8	4.3	5.3	7.4	5.4
3 सेवाएं	**8.5**	**10.2**	**10.3**	**10.1**	**10.5**
3.1 निर्माण	10.9	12.5	12.1	12.4	9.5
3.2 व्यापार, होटल एवं रेस्टोरेंट, यातायात, भण्डारण और संप्रेषण	12.0	10.6	11.5	11.7	13.2
3.3 वित्त पोषण, बीमा, स्थावर संपदा और व्यापार सेवाएं	4.5	9.2	9.7	8.8	8.9
3.4 समुदाय, सामाजिक और निजी सेवाएं	5.4	9.2	7.8	7.3	9.5
4 सकल घरेलू उत्पाद	**8.5**	**7.5**	**8.4**	**8.5**	**8.9**

सारणी 8 : औद्योगिक उत्पादन का सूचकांक (आइआइपी)

क्षेत्र	आइआइपी में भार (हिस्सा)	वृद्धि दर (प्रतिशत)			
		अप्रैल-मार्च		अप्रैल-अगस्त	
		2004-05	2005-06	2005	2006
1	2	3	4	5	6
आइआइपी	100.0	8.4	8.1	8.7	10.6
मूल सामान	35.6	5.5	6.6	6.9	8.3
पूंजीगत सामान	9.3	13.9	15.8	13.8	18.6
मध्यस्थ सामान	26.5	6.1	2.4	3.5	9.5
उपभोक्ता सामान	28.7	11.7	12.0	13.7	11.3
i) कंज़ूमर ड्यूरेबल्स	5.4	14.4	14.9	13.0	16.6
ii) कंज़ूमर नान-ड्यूरेबल्स	23.3	10.8	11.1	13.9	9.5

तदनुरुपी अवधि में यह 6.1 प्रतिशत था। इस सुधार को कच्चे तेल और पेट्रोलियन रिफाइनरी उत्पादों के उत्पादन में आए बदलाव से समर्थन मिला। इन दो क्षेत्रों में एक वर्ष पूर्व गिरावट दर्ज की गई थी। तथापि, विद्युत सृजन, कोयला और तेल उत्पादन मंद ही रहा (सारणी 9)।

तेल के बढ़ते वैश्विक मूल्यों के प्रति औद्योगिकी क्षेत्र द्वारा दर्शाया गया लचीलापन देश में आर्थिक सुधारों को शुरू करने के वर्षों से अब तक की अवधि के दौरान औद्योगिकी क्षेत्र में हासिल की गई अंतर्निहित सुदृढ़ता और क्षमताओं का परिचायक है। आटोमोबाइल्स और फार्मास्युटिकल्स जैसे क्षेत्रों के संबंध में बढ़ती प्रतिस्पर्धात्मकता के साक्ष्य हैं और इन क्षेत्रों के वैश्विक उतपादन के लिए निर्माण आधार के रूप में उभरने की संभावना है। लेकिन दूसरी ओर, तेल और अन्य जिंसों के बढ़े हुए मूल्यों के कारण बढ़ी इनपुट लागतों, चीन से किए जाने वाले संभावित आयातों तथा घरेलू कुशल श्रम की बढ़ रही संभावित कमी जैसी ढांचागत दिक्कतों से उत्पन्न चुनौतियों से निपटने के लिए घरेलू विनिर्माण क्षेत्र को वर्तमान विकास गति को बनाये रखने के लिए अपनी उत्पादकता और प्रतिस्पर्धात्मकता में निरंतर सुधार करना होगा।

सारणी 9 : मूलभूत गतिविधि

क्षेत्र	आइआइपी में भार (प्रतिशत)	प्रतिशत वृद्धि दर (वर्ष दर वर्ष आधार)			
		अप्रैल-मार्च		अप्रैल-सितंबर	
		2004-05	2005-06	2005	2006
1	2	3	4	5	6
विद्युत	10.2	5.2	4.9	4.7	6.7
कोयला	3.2	6.2	7.0	6.0	5.3
तैयार स्टील	5.1	8.4	8.0	13.7	7.2
सीमेंट	2.0	6.6	12.3	11.4	10.0
कच्चा पेट्रोलियम	4.2	1.8	-5.3	-5.0	4.1
पेट्रोलियम रिफायनरी उत्पाद	2.0	4.3	2.1	-0.7	12.3
कुल मूलभूत सूचकांक	**26.7**	**5.8**	**5.3**	**6.1**	**7.3**

कार्पोरेट लाभप्रदता

हाल के वर्षों में भारतीय कार्पोरेट क्षेत्र की प्रमुख विशेषता विश्व की अर्थव्यवस्था के साथ इसका बढ़ता एकीकरण रहा है। वस्तुओं और सेवाओं के पण्य व्यापार के अलावा, इस एकीकरण ने बड़े स्तर पर विदेशी विलय और अधिग्रहण गतिविधियों का रूप ले लिया है। इस प्रकार भारत न केवल विदेशी प्रत्यक्ष निवेश का प्राप्तकर्ता देश है बल्कि कार्पोरेट क्षेत्र भी विदेश में निवेश करने की संभावनाएं तलाश रहा है। इस क्षेत्र में विदेशों में भारतीय निवेशों में क्रमिक उदारीकरण के बाद भारतीय कंपनियों द्वारा विदेशों में संयुक्त उद्यमों तथा पूर्णतः स्वामित्व वाली अनुषंगियों में निवेश वैश्विक कारोबार को बढ़ाने के महत्वपूर्ण जरिए के रूप में उभरा है। विदेश स्थानों का तुलनात्मक लाभ प्राप्त करने, उपयुक्त प्रौद्योगिकी हासिल करने तथा बड़े पैमाने पर उत्पादन की किफायतें एवं उत्पादकता लाभ हासिल करने के अंतिम उद्देश्य के साथ एक विपणन एवं वितरण आधार हासिल करने के लिए भारतीय फर्में विदेश स्थित फर्मों को अधिग्रहीत कर रही हैं। जैसा कि पूर्व में उल्लेख किया गया है, वर्ष के दौरान भारत द्वारा प्रत्यक्ष विदेशी निवेश 2.7 बिलियन अमरिकी डालर रहा (चार्ट 23)। तथापि, अधिग्रहण का मूल्य काफी अधिक है क्योंकि इन आंकड़ों में भारत से बाह्य प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के सीमा पार विप्रेषण ही शामिल हैं। विदेशों में स्टाक एक्सचेंजों पर सूचीबद्ध भारतीय कंपनियों की संख्या में निरंतर वृद्धि देखी गई है। भारतीय कार्पोरेट क्षेत्र का बढ़ता एकीकरण उनके निर्यातों और आयातों के रुझानों से भी दिखाई देता है। बिक्रियों में पण्य निर्यातों का अनुपात 1990-91 के 6.2 प्रतिशत से तीन गुना बढ़कर 2004-05 में 18.6 प्रतिशत हो गया जबकि बिक्रियों में आयातों का प्रतिशत इसी अवधि में 7.9 प्रतिशत से बढ़कर 21.6 प्रतिशत हो गया (चार्ट 24)।

चार्ट 23 : भारत का विदेशों में प्रत्यक्ष निवेश

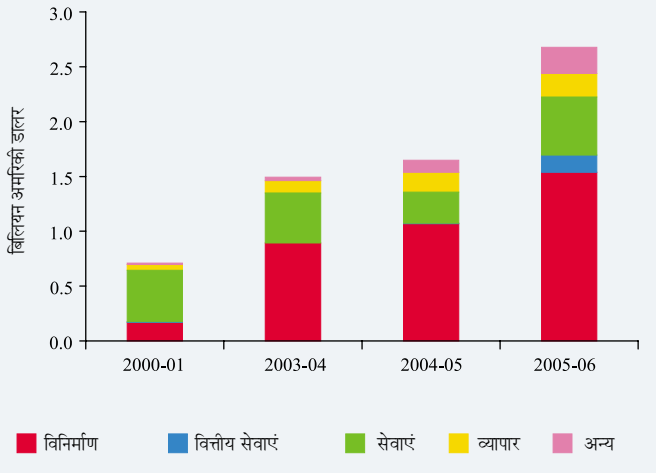

चार्ट 24 : कार्पोरेट क्षेत्र : बाह्य व्यापार

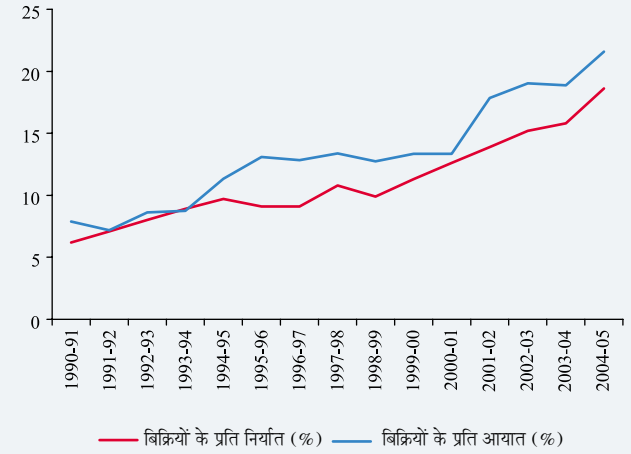

पिछले तीन वर्षों में कार्पोरेट लाभप्रदता में मजबूत वृद्धि दर्ज की गई है। अक्तूबर-दिसंबर 2002 से अप्रैल-जून 2005 के बीच की लगातार 11 तिमाहियों में कुछेक गैर वित्तीय गैर सरकारी कंपनियों का कर पश्चात लाभ 40 प्रतिशत से अधिक दर पर बढ़ा है। बाद में, 2005-06 की तीन तिमाहियों में बढ़ती इनपुट लागतों और ऋण भुगतान करने की उच्च लागतों के कारण लाभप्रदता में वृद्धि में गिरावट रही। 2006-07 के लिए उपलब्ध सूचना गिरावट की प्रवृति के बदलने की ओर संकेत करती है, अप्रैल-जून 2006 के दौरान कर पश्चात लाभ में पूर्ववर्ती तिमाही की लगभग 15 प्रतिशत वृद्धि की तुलना में 35 प्रतिशत की वृद्धि हुई (सारणी 10)। यह रुचिकर है कि इनपुट लागतों में तीव्र वृद्धि होने के बावजूद कार्पोरेट लाभप्रदता मजबूत बनी हुई है। संभवतः यह मजबूत लाभप्रदता उत्पादकता लाभों के कारण हो सकती है। भविष्य को देखते हुए एक महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि कार्पोरेट लाभप्रदता और उत्पादकता कब तक तेजी दर्शायेगी?

घरेलू स्टाक बाजार का उबरना, कार्पोरेट निष्पादन में तेजी और कारोबारी विश्वास ये सभी संकेत करते हैं कि निवेश माहौल सकारात्मक बना हआ है तथा इससे आर्थिक गतिविधि को मदद मिलनी चाहिए। निवेश उद्देश्यों में भारी वृद्धि हुई है, इंडस्ट्रियल एंटरप्रेन्योर मेमोरेंडा में दर्ज निवेश उद्देश्यों का मूल्य 2003-04 के 1,54,954 करोड़ रुपये के दुगुने से ज्यादा बढ़कर 2005-06 में 3,82,743 करोड़ रुपये हो गया है। तथापि, अभी यह देखना शेष है कि इनमें से कितने निवेश फलीभूत होते हैं? जैसे-जैसे ये निवेश उद्देश्य फलीभूत होगे निवेशों के वित्त पोषण के मुद्दे भी इस संदर्भ में काफी महत्व रखेंगे।

बैंकिंग विकास

वित्तीय वर्ष 2006-07 के दौरान बैंक जमाओं और ऋण में मजबूत वृद्धि दर्ज की गई है जो सुदृढ़ मांग स्थितियों का परिचायक है। एक वर्ष से अधिक समय से बैंक ऋण में वर्ष-दर-वर्ष आधार पर 30 प्रतिशत से अधिक वृद्धि दर्ज की गई है। हालांकि गृहनिर्माण और अन्य खुदरा तथा वाणिज्यिक स्थावर संपदा जैसे क्षेत्रों में बैंक ऋण में काफी तेजी से वृद्धि हुई है, इसके अलावा बैंक ऋण मोटे तौर पर सुविभाजित है। इस संदर्भ में इस बात पर ध्यान देना तर्कसंगत होगा कि 2000 के बाद से ऋण-जीडीपी अनुपात में तीव्र वृद्धि होने के बावजूद भारत में यह अनुपात कई एशियाई अर्थव्यवस्थाओं और विकसित अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में निम्न स्तर पर है। जमाओं में वृद्धि का विस्तार हुआ है जो आंशिक रूप से मीयादी जमाओं पर उच्च ब्याज दरों और 5 वर्ष से अधिक अवधि वाली जमाओं पर कर लाभ देने के कारण हो सकता है। इसी बीच, यथा अक्तूबर 13, 2006 व्यापक मुद्रा (ब्राड मनी $एम_3$) में वर्ष दर वर्ष आधार पर 19.0 प्रतिशत की वृद्धि वार्षिक नीति वक्तव्य में अनुमानित 15.0 प्रतिशत की दिशासूचक पथ से अधिक रही (सारणी 11)। जैसा कि रिज़र्व बैंक द्वारा मध्यावधि समीक्षा (अक्तूबर 2006) में उल्लेख किया गया है, वर्तमान

सारणी 10 : कार्पोरेट क्षेत्र का निष्पादन

(वृद्धि दर, प्रतिशत)

मद	2003-04	2004-05	2005-06	2005-06				2006-07
				ति1	ति2	ति3	ति4	ति1
1	2	3	4	9	10	11	12	13
बिक्रियां	16	24.1	16.9	18.5	16.4	13.2	19.5	25.6
व्यय	13.2	21.9	16.4	18	16.3	12.7	18.9	24.6
सकल लाभ	25	32.5	20.3	32	19.1	21.2	16.6	33.9
ब्याज लागत	-11.9	-5.8	1.9	-13.5	-8	4.6	3.8	19.9
कर पश्चात लाभ	59.8	51.2	24.2	54.2	27.5	27	15.1	34.7

टिप्पणियां : 1. वृद्धि दरें पिछली वर्ष की तदनुरूपी अवधि की तुलना में संदर्भाधीन अवधि में स्तर में आया प्रतिशत परिवर्तन हैं।

2. कॉलम (2) और कॉलम (3), जो 2003-04 एवं 2004-05 के लेखापरीक्षित तुलन पत्रों पर आधारित हैं, के अलावा आंकडे गैर-वित्तीय गैर-सरकारी कंपनियों के लेखापरीक्षित /अलेखापरीक्षित संक्षिप्त परिणामों पर आधारित हैं।

* : अनंतिम.

सारणी 11 : मुद्रा और ऋण

(प्रतिशत)

मद	वर्ष दर वर्ष वृद्धि	
	अक्तूबर 14, 2005	अक्तूबर 13, 2006
1	2	3
व्यापक मुद्रा	**16.8**	**19.0**
जिसमें से :		
जनता के पास मुद्रा	14.6	17.3
वाणिज्यिक बैंक जमाएं	18.6	20.7
वाणिज्यिक बैंकों के गैर-खाद्य ऋण	31.8	30.5
वाणिज्यिक बैंकों के गैर-खाद्य ऋण	5.9	2.5

संकेतों के अनुसार अब मुद्रा और ऋण एग्रीग्रेट्स में आरंभिक अनुमानों की तुलना में कुछ ज्यादा वृद्धि होने का अनुमान है। वाणिज्यिक क्षेत्र से ऋण की लगातार मांग को देखते हुए बैंकों ने सरकारी प्रतिभूतियों में अपने वृद्धिशील निवेशों पर लगाम लगाना जारी रखा। परिणामस्वरूप, बैंकों की एसएलआर प्रतिभूतियों में धारिताएं अक्तूबर 13,2006 को गिरकर लगभग 30 प्रतिशत हो गई जबकि एक वर्ष पूर्व ये लगभग 35 प्रतिशत थीं। जैसा कि यह अनुपात 25 प्रतिशत की न्यूनतम सांविधिक अपेक्षा के करीब पहुंच रहा है, एसएलआर प्रतिभूतियों में अपने वृद्धिशील निवेशों को कम करके वाणिज्यिक क्षेत्र को ऋण देने के लिए अपने आस्ति पोर्टफोलियों में अदलाबदली करने के लिए बैंकों के पास उपलब्ध लोचता धीरे-धीरे कम हो रही है। बैंक ऋण में निरंतर उच्च वृद्धि के संदर्भ में रिज़र्व बैंक ने बड़े स्तर पर ऋण वृद्धि दर्शाने वाले क्षेत्रों के लिए जोखिम भार तथा प्रावधान अपेक्षाओं को बढ़ाया है। उच्च ऋण वृद्धि को देखते हुए, रिज़र्व बैंक बैंकों का ध्यान आस्ति गुणवत्ता सुनिश्चित करने की ओर भी आकृष्ट कर रहा है ताकि वित्तीय स्थिरता बनाये रखा जा सके।

आधारभूत निवेशों के वित्तपोषण करने की बृहत्तर मांग, सेवा क्षेत्र एसएमई और ग्रामीण उद्यमों के बढ़ते आकार को देखते हुए, ऐसी संभावना है कि बैंक ऋण के लिए मांग में तेजी बनी रहेगी। वित्तीय समावेश पर जोर से वित्तीय मध्यस्थता की बढ़ती आवश्यकता होगी। अतः आगामी वर्षों में कार्पोरेट क्षेत्र को बैंक ऋण के लिए बड़े स्तर पर प्रतिस्पर्धा का सामना करना होगा क्योंकि बैंक खुदरा ऋण जैसे उभरते उपायों की तलाश कर रहे हैं। बैंकिंग प्रणाली को इन नई चुनौतियों, अवसरों और जोखिमों का प्रत्युत्तर उचित रूप से देना होगा। नई ग्रामीण ऋण जरूरतों को पूरा करने के लिए ऋण सुपुर्दगी के नवोन्मेषी तरीके ढूंढने होंगे जिनमें भण्डारण, वेयरहाउसिंग, प्रसंस्करण तथा खेत से लेकर बाज़ार तक ढुलाई की व्यवस्था सभी का वित्तपोषण करने वाली संपूर्ण आपूर्ति श्रृंखला शामिल है। बैंक ऋण की प्रत्याशित मांग को देखते हुए, बैंकों को इसके साथ-साथ जमाराशियों के संग्रहण में वृद्धि करने के कदम भी उठाने होंगे। लेकिन यह जरूरी है कि मौद्रिक वृद्धि को मूल्य स्थिरता की अपेक्षाओं के अनुरूप रखा जाए।

मुद्रास्फीति

2006-07 के दौरान अब तक हेडलाइन मुद्रास्फीति (अक्तूबर 21, 2006 की स्थिति के अनुसार 5.4 प्रतिशत) आपूर्ति संकटों, प्राथमिक खाद्य वस्तुओं के मूल्यों के बढ़ने के बावजूद सापेक्ष रूप से नियंत्रित रही है। गेहूं, दालों और दूध के बढ़े हुए मूल्यों के कारण वर्ष दर वर्ष आधार पर प्रमुख वस्तुओं में मुद्रास्फीति बढ़कर 7.8 प्रतिशत हो गई। जहां तक ईंधन के मूल्यों का संबंध है, घरेलू मुद्रास्फीति पर इसका असर आधार प्रभाव के कारण हाल के सप्ताहों में क्रमिक रूप से कम हुआ है। इस संदर्भ में यदि कच्चे तेल के अंतरराष्ट्रीय मूल्यों में हाल ही में हुई गिरावट बनी रहती है तो यह स्वागत योग्य होगा। तथापि, इस बात पर ध्यान देने की आवश्यकता है कि घरेलू मूल्यों पर कच्चे तेल के बढते हुए अंतरराष्ट्रीय मूल्यों का पास-थ्रू अपूर्ण रहा क्योंकि एलपीजी और मिट्टी के तेल के मूल्य क्रमशः नवंबर 2004 और अप्रैल 2002 से अपरिवर्तित रहे हैं। हाल के महीनों में विनिर्मित उत्पाद मुद्रास्फीति भी बढ़ी है हालांकि यह सापेक्ष रूप से संगत रही है (चार्ट 25 और 26)।

उपभोक्ता मूल्य मुद्रास्फीति - जिसका खाद्य वस्तुओं के मूल्यों में बड़ा हिस्सा रहता है - के विभिन्न उपाय थोक मूल्य मुद्रास्फीति की तुलना में अधिक रहे। मुद्रास्फीति अपेक्षाओं को नियंत्रित रखने के लिए रिज़र्व बैंक ने जून 2006 और जुलाई 2006 से रिवर्स रेपो दर और रेपो दर में क्रमशः 25 आधार बिन्दुओं की बढ़ोतरी की है। रिज़र्व बेंक ने मध्यावधि समीक्षा (अक्तूबर 2006) में रेपो दर में 25 आधार बिन्दुओं की वृद्धि कर इसे 7.25 प्रतिशत किया जबकि रिवर्स रेपो दर को 6.00 प्रतिशत के स्तर पर अपरिवर्तित रखा गया। इस प्रकार, अक्तूबर 2004 से अब तक रिवर्स रेपो और रेपो दर में क्रमशः 150 आधार बिन्दुओं और 125 बिन्दुओं का संचयी वृद्धि हुई है। मौद्रिक उपायों को वित्तीय उपायों जैसे गेहूं, दालों और चीनी के आयातों को सीमा शुल्क से छूट देना, पाम तेल पर सीमा

चार्ट 25: थोक बिक्री मूल्य मुद्रास्फीति

चाट 26 : प्रमुख समूहों की मुद्रास्फीति

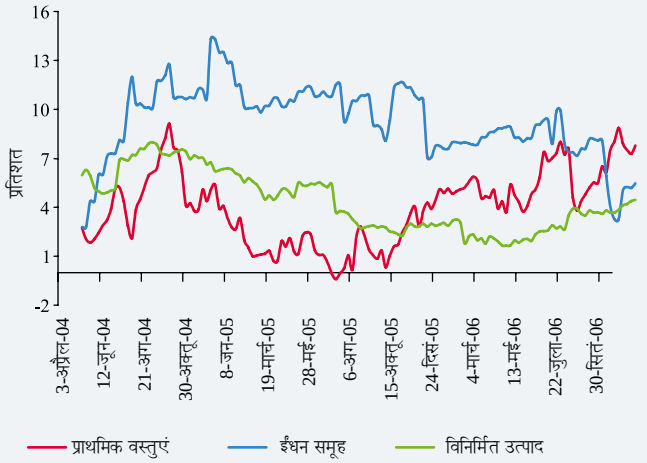

शुल्क में कमी तथा दालों के निर्यात पर प्रतिबंध से मदद मिली है। प्राथमिक वस्तुओं के मूल्यों पर दबाव, गेहूं के मामले में निम्न स्टाक तथा वैश्विक उत्पादन में कमी ने मौद्रिक प्रबंधन के लिए निरंतर चुनौतियां पेश की। इसके अलावा, जैसा कि 2006-07 के वार्षिक नीति वक्तव्य की मध्यावधि समीक्षा में पाया गया है, हाल ही में हुई गतिविधियां विशेष रूप से उच्च वृद्धि और उपभोक्ता मुद्रास्फीति तथा आस्तियों के बढ़ते मूल्य तथा बढ़ती ढांचागत दिक्कतों, अर्थव्यवस्था की संभावित ओवरहीटिंग के खतरों और समय के निहितार्थ तथा मौद्रिक नीति की दिशा को रेखांकित करती हैं। हालांकि वर्तमान में भारतीय अर्थव्यवस्था की संभावित ओवरहीटिंग का निर्यायक साक्ष्य नहीं है, अधिशेष सकल मांग की ओर इशारा करने वाले उपलब्ध सभी संकेतों पर निगरानी रखने का महत्व शायद पहले से ज्यादा तर्कसंगत है।

दक्षिण-पश्चिम मानसून मौसम (जून-सितम्बर 2006) के दौरान संचयी वर्षा सामान्य के करीब थी। तथापि, वर्षा का अंतर-समय और अंतर स्थानिक वितरण अनियमित रहा। परिणामस्वरूप, 2006 के लिए खरीफ खाद्यान्न का उत्पादन अब 2005 में प्राप्त स्तर से लगभग 4 प्रतिशत कम होने का अनुमान है। भविष्य के बारे में विचार करते हुए, अक्तूबर 12, 2006 को 76 प्रमुख जलाशयों में कुल स्वच्छ जल संग्रहण जलाशयों के कुल स्तर का 90 प्रतिशत है जो एक वर्ष पहले के 81 प्रतिशत के स्तर से अधिक है तथा आगामी रबी फसलों के अच्छी पूर्व सूचना देता है। तथापि, मध्यावधिक संदर्भ में हाल के वर्षों में घरेलू खाद्यान्न उत्पादन में ठहराव स्पष्ट चिन्ता का विषय बन कर उभरा है जो घरेलू मांग और घरेलू मूल्यों दोनों पर दबाव डाल रहा है। इन मुद्दों का बाद के खण्डों में विस्तार से वर्णन किया गया है।

बाह्य क्षेत्र

अंततः बाह्य क्षेत्र की गतिविधियां पण्य और सेवाओं दोनों के निर्यातों में सतत तेजी का संकेत करती हैं जो भारतीय विनिर्माण और सेवाओं की बढ़ती प्रतिस्पर्धात्मकता का सूचक है। अगस्त 2006 के मध्य तक अंतरराष्ट्रीय कच्चे तेल के मूल्यों में हुई वृद्धि के कारण अब तक के दौरान तेल आयातों में बड़े पैमाने पर वृद्धि दर्ज की गई है। हाल में अंतरराष्ट्रीय कच्चे तेल के मूल्यों का नरम होना, यदि जारी रहता है, तेल आयातों में और वृद्धि को रोक सकता है। दूसरी ओर, गैर-तेल आयातों में तीव्र कमी देखी गई जो आंशिक रूप से स्वर्ण और चांदी के आयातों (जिनमें अप्रैल-जून 2005 के दौरान हुई 52 प्रतिशत की वृद्धि के विपरीत अप्रैल-जून 2006 में 30 प्रतिशत की कमी हुई है) के कारण हो सकती है। पूंजीगत वस्तुओं के आयात में सुदृढ़ वृद्धि (अप्रैल-जून 2006 के दौरान 38 प्रतिशत) जारी रही। प्रत्यक्ष विदेशी निवेश, एनआरआई जमाओं और एडीआर/जीडीआर के तहत निर्गमों के रूप में अधिक प्राप्तियों के कारण पूंजी प्रवाह में तेजी बनी रही हालांकि विदेशी संस्थागत निवेशकों (एफआइआइ) द्वारा पैया निकाला गया। समग्र रूप से चालू वित्तीय वर्ष के दौरान अब तक भारत का विदेशी मुद्रा भण्डार 14.5 बिलियन अमरीकी डालर से बढ़ा और यह अक्तूबर 20, 2006 को 166.2 बिलियन अमरीकी डालर के स्तर पर था।

इसके अलावा, तेल आयात के बढ़ते बिल के बावजूद 2006-07 में चालू खाते में अनुमानित घाटा पण्य निर्यातों की अन्तर्निहित सुदृढ़ता, अदृश्य निर्यातों और पूंजी प्रवाह के कारण विगत की तरह सतुलित है। अंतः 2006-07 में भुगतान संतुलित के सुगम बने रहने की संभावना है।

संक्षेप में, 2006-07 के दौरान अब तक हुई गतिविधियों का मूल्यांकन हाल के वर्षों में प्रदर्शित मजबूत आर्थिक वृद्धि के और अधिक सुदृढ़ होने का संकेत करती हैं। वृद्धि की वर्तमान तेजी को बनाए रखने तथा इसमें और सुधार करने के लिए कृषि, मूलभूत सुविधाओं तथा वित्तीय समेकन जैसे कई मुद्दों पर विचार करना होगा। इन पर आगे चर्चा की गई है।

VI. मुद्दे

अपनी टिप्पणियों को संक्षेप में प्रस्तुत करने के बजाय मैं उन कुछेक मुद्दों पर प्रकाश डालना चाहूंगा जो आने वाले समय में महत्वपूर्ण होंगे।

कृषि

हाल के वर्षों में कृषि क्षेत्र में कम लेकिन उथल-पुथल भरी वृद्धि रही है। दसवीं पंचवर्षीय योजना के शुरुआती चार वर्षों के दौरान कृषि क्षेत्र में वास्तविक जीडीपी वृद्धि औसतन दो प्रतिशत प्रतिवर्ष रही जबकि योजना अवधि (2002-07) में चार प्रतिशत वृद्धि की परिकल्पना की गई थी। कृषि क्षेत्र में इस कम और उथल-पुथल भरी वृद्धि का प्रमुख कारण प्रमुख फसलों जैसे कि गेहूं, चीनी और दालों के घरेलू उत्पादन में आई स्थिरता है। उदाहरणार्थ, 1999-2000 में 76 मिलियन टन के रिकार्ड उत्पादन के बाद गेहूं का उत्पादन लगभग 70 मिलियन टन की रेंज में रहा है। इसी प्रकार दालों का उत्पादन भी 1998-99 के 14.9 मिलियन टन के उत्पादन

स्तर को छूने में नाकाम रहा है। 2005-06 में 13.1 मिलियन टन पर दालों का उत्पादन 15 वर्ष से अधिक समय पूर्व (1990-91 में 14.3 मिलियन टन) प्राप्त उत्पादन स्तर से भी कम है। आंशिक रूप से कृषि क्षेत्र में निवेश में आए ठहराव के कारण उत्पादन में स्थिरता हो सकती है। यह निवेश अपरिवर्तित मूल्यों पर 2004-05 के दौरान 43,123 करोड़ रुपये रहा जो 1999-2000 के 43,473 करोड़ रुपये के निवेश स्तर से कम है। परिणामस्वरूप, जीडीपी के प्रति निवेश का अनुपात 1999-2000 के 2.2 प्रतिशत से गिरकर 2004-05 में 1.7 प्रतिशत हो गया (चार्ट 27)।

यदि भारतीय अर्थव्यवस्था को 8 प्रतिशत और इससे अधिक वृद्धि दर हासिल करनी है तो प्रमुख फसलों के उत्पादन और कृषि निवेश में आए ठहराव को पलटने की आवश्यकता है। सर्वप्रथम, सिंचाई सुविधाओं पर निवेश परिव्यय को बढ़ाये जाने तथा जल स्रोतों के किफायती प्रयोग पर ध्यान देने की आवश्यकता है। इस संदर्भ में, भूमिगत जल के अत्यधिक उपयोग को रोकने के लिए पानी का उपयुक्त मूल्य निर्धारण करना सहायक होगा। दूसरे, भावी मूल्य और मानसून स्थितियों जैसी कुछेक जोखिमों, जिनका सामना किसान करते हैं, को देखते हुए जोखिम को कम करने की उचित नीतियां लागू करने की आवश्यकता है। तीसरे, भौतिक संसाधनों के उत्पादन में वृद्धि करने, आपूर्ति श्रृंखला प्रबंधन में सुधार करने तथा कृषि में मूल्य-संवर्धन के लिए ग्रामीण मूलभूत ढांचे पर ज्यादा ध्यान देने की जरूरत है। ग्रामीण मूलभूत ढांचे में सुधार से खाद्य प्रसंस्करण और अन्य कृषि आधारित उद्योगों को बढ़ावा मिलेगा। इस संदर्भ में, *भारत निर्माण* के अंतर्गत ग्रामीण मूलभूत विकास पर ध्यान देना स्वागत-योग्य है। चौथा, वैश्वीकरण, बढ़ती आय और शहरीकरण भारतीय कृषि में और ज्यादा विविधता और मूल्य संवर्धन की मांग करते हैं। उपभोक्ता पैटर्न में आया बदलाव फसलों के लिए भूमि और अन्य संसाधनों, जिनमें मूल्य संवर्धन की ज्यादा संभावना हो, में परिवर्तन की ओर इशारा करता है। पांचवा, उत्पादन प्रणालियों का विपणन, एग्रो-प्रोसेसिंग और अन्य मूल्य संवर्धित गतिविधियों के साथ प्रभावी संबंध कृषि में विविधता लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायेगा। छठा, आने वाले वर्षों में कृषि अनुसंधान पर ज्यादा ध्यान देने की आवश्यकता होगी क्योंकि अब तक प्राप्त सफलता कुछेक चुनिंदा फसलों तक ही सीमित रही है। अंततः ग्रामीण सहकारी ऋण प्रणाली के पुनरोद्धार, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को सुदृढ़ बनाने, ग्रामीण अर्थव्यवस्था में निवेश के लिए वाणिज्यिक बैंकों को प्रोत्साहन देने तथा उपर्युक्त मूल्य पर पर्याप्त और समय पर ऋण की सुपुर्दगी सुनिश्चित करने के लिए रिज़र्व बैंक अपने प्रयास तेज कर रहा है कृषि क्षेत्र में उच्च वृद्धि और स्थिरता गैर-कृषि क्षेत्र के लिए मांग में तीव्र वृद्धि को प्रोत्साहित करेगी (भारतीय रिज़र्व बैंक, वार्षिक रिपोर्ट 2005-06)।

चार्ट 27 : कृषि में निवेश

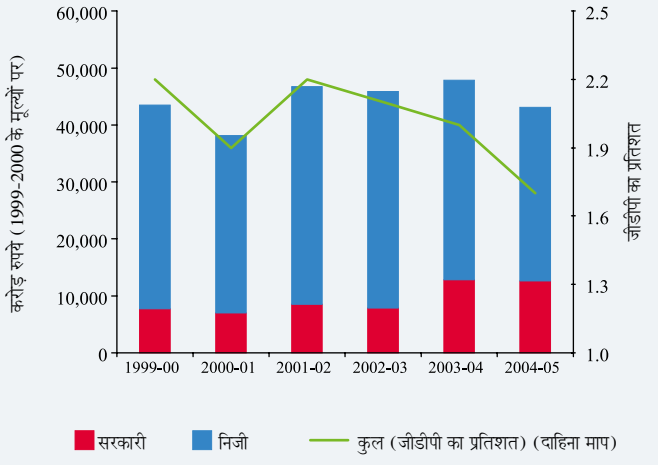

मूलभूत सुविधाएं

विनिर्माण में आगामी पुररुत्थान का बने रहना और सुदृढ़ होना कई क्षेत्रों में मूलभूत सुविधाओं में सुधार पर काफी निर्भर करेगा। दूर संचार, नागरिक उड्डयन, सड़क और कुछ हद तक पत्तन और रेलवे जैसे क्षेत्रों में मूलभूत सुविधाओं में हुआ सुधार विद्युत क्षेत्र में भी किए जाने की आवश्यकता है। विद्युत निर्माण कई बातों से प्रभावित रहा जैसे कि नीतिगत कमियां, अत्यधिक ट्रांसमिशन और वितरण हानियां, कोयला और गैस की उपलब्धता में उभरती दिक्कतों के साथ बकायों की वसूली आदि। विद्युत की अविश्वसनीय आपूर्ति, और वह भी चीन जैसे अन्य देशों की तुलना में उच्च दरों पर, का घरेलू विनिर्माण क्षेत्र की प्रतिस्पर्धात्मकता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है।

शहरों में मूलभूत सुविधाओं पर भी ज्यादा ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है। विश्व स्तर पर शहरों ने लगातार संस्थागत और प्रौद्योगिकीय नवोन्मेषी माहौल प्रदान किया है तथा आर्थिक विकास के संचालन (इंजन) के रूप में कार्य किया है। इस संदर्भ में, यह ध्यान दिया जाए कि पिछली सदी में भारत ने 'शहरी विस्फोट' की स्थिति का सामना नहीं किया था जबकि पूरे विश्व में तेजी से शहरीकरण हुआ था। भारत में शहरीकरण 1951 में 17.6 प्रतिशत से बढ़कर 1981 में 23.7 प्रतिशत तथा 2001 में और बढ़कर 27.8 प्रतिशत के स्तर पर हुआ। अपनी प्रति व्यक्ति निम्न आय के अनुरूप भारत का नाम शहरीकरण के स्तर के अनुसार सूचीबद्ध देशों की सूची में निचले 30 देशों में था। अपने निम्न स्तरीय शहरीकरण के बावजूद भारत की जनसंख्या 2001 में 285 मिलियन से अधिक बढ़ी जो देश की कुल जनसंख्या का लगभग 28 प्रतिशत थी। पिछले दशक में जनसंख्या में विशेष रूप से समग्र वृद्धि 70 मिलियन लोग के स्तर पर विशाल रही जो ब्राजील, चीन, इंडोनेशिया, रुस और अमरीका को छोड़कर सभी देशों की शहरी जनसंख्या में वृद्धि दर के विश्व की तीव्र वृद्धि में शामिल नहीं होने के बावजूद भारत में शहरीकरण का आकार अपने आप में बहुत विशाल है। इसके अलावा, शहरी जनसंख्या में अधिकांश वृद्धि प्रत्येक स्तर पर मौजूदा शहरों के विस्तार के कारण हुई है तथा यह नए शहरों को

शामिल किए जाने के कारण नहीं है। इस स्थिर स्थिति के परिणामस्वरूप न केवल शहर की प्रमुखता का क्रम बना रहा बल्कि यह देश के बड़े क्षेत्रों से भी संबद्ध है जो किसी भी आकार के शहरी सेटलमेंट से लगातार वंचित है जिसके कारण इन क्षेत्रों में 10-15 प्रतिशत की दर पर बेहद कम शहरीकरण का स्तर रहा है (सारणी 12)।

अध्ययनों से पता चलता है कि शहरों के आकार का दुगुना होना 3-8 प्रतिशत के बृहद उत्पादकता लाभ से जुड़ा है। संभावना है कि इस दर पर 40 प्रतिशत से अधिक की उत्पादकता वृद्धि के साथ 1,00,000 निवासियों वाला शहर 10 मिलियन निवासियों वाले शहर में तब्दील हो सकता है। ये लाभ उत्पाद तथा श्रमिक बाजारों से निकटता से उत्पन्न होते हैं। एक ओर जहां निकटता से व्यापार और ढुलाई लागतों में बचत होती हैं वही दूसरी ओर कुशल श्रमिक भी उपलब्ध होते हैं। आर्थिक संकेद्रण से उस मूलभूत निवेश राशि से कम राशि की जरूरत होती है जो देश के बड़े भाग में निवेश को संवितरित करने की स्थिति में आवश्यक होती। इस प्रकार, साक्ष्यों से संकेत मिलता है कि शहरी संचय से बड़े स्तर पर उत्पादकता लाभ प्राप्त होते हैं। तद्नुसार, देश में शहरी मूलभूत सुविधाओं की गुणवत्ता, नियंत्रण और प्रबंधन में महत्वपूर्ण सुधार करना भारत के लिए आवश्यक है ताकि आर्थिक विकास और उत्पादकता की गति को बनाये रखा जा सके तथा इसे बढ़ाया जा सके।

मानव संसाधन विकास

अंततः विकास की वर्तमान गति को बढ़ाने तथा संभावित जनसांख्यिकीय अवसरों के लाभ प्राप्त करने के लिए देश में उपलब्ध प्राथमिक और माध्यमिक शैक्षणिक सुविधाओं में काफी सुधार करना आवश्यक होगा। इसके अलावा, आर्थिक गतिविधियों के कौशल-प्रधान क्षेत्रों - उद्योगो और सेवा क्षेत्र दोनों - में बढ़ते केंद्रीकरण को देखते हुए उच्च शिक्षा की गुणवत्ता पर नए सिरे से ध्यान देना जरूरी है।

सारणी 12 : शहरीकरण में रुझान

(जनसंख्या मिलियन में)

वर्ष	यूए/शहरों की संख्या	कुल जनसंख्या	ग्रामीण जनसंख्या	शहरी जनसंख्या	शहरी / कुल (%)
1	2	3	4	5	6
1901	1,830	238	213	26	10.8
1911	1,815	252	226	26	10.3
1921	1,944	251	223	28	11.2
1931	2,066	279	246	34	12.0
1941	2,253	319	275	44	13.0
1951	2,822	361	299	62	17.3
1961	2,334	439	360	79	18.0
1971	2,567	548	439	109	19.9
1981	3,347	683	524	160	23.3
1991	3,769	846	629	218	25.7
2001	4,378	1,027	742	285	27.8

राजकोषीय उत्तरदायित्व

जैसा कि पूर्व में उल्लेख किया गया है, नब्बे के दशक के आरंभ से राजकोषीय समेकन में प्राप्त सफलता मिलीजुली रही है। इसके देखते हुए, पिछले तीन वर्षों में हासिल राजकोषीय समेकन प्रोत्साहित करने वाला रहा है। वास्तव में, सरकारी क्षेत्र की बचतों में 4.2 प्रतिशत की बचत, समग्र रूप से 29 प्रतिशत से अधिक की बचत और 30 प्रतिशत से अधिक दर पर निवेश का प्रमुख कारण रही है। सरकारी क्षेत्र की बचत 2001-02 में जीडीपी की 2.0 प्रतिशत (ऋणात्मक) थी और 2004-05 में 2.2 प्रतिशत (धनात्मक) थी। राजकोषीय समेकन से बचतों में और सुधार होने की संभावना है और इससे उत्पादकता और दक्षता लाभ भी प्राप्त होंगे क्योंकि निजी क्षेत्र के लिए और अधिक संसाधन उपलब्ध होंगे।

2006-07 के पहले पांच महीनों (अप्रैल-अगस्त 2006) के दौरान केंद्रीय सरकार के वित्त में प्रगति संकेत करती है कि बजट अनुमानों के अनुपात के रूप में घाटे के प्रमुख घटक 2005-06 की तदनुरुपी अवधि की तुलना में अधिक थे। घाटे के बढ़ने के कारणों में गैर-योजनागत राजस्व खर्च में बड़े स्तर पर वृद्धि, ब्याज के रूप में ज्यादा भुगतान, खाद्य और खाद पर उच्चतर सब्सिडी और राज्यों का अनुदान प्रमुख रहे। इन सभी घटकों ने निगम कर, आयकर और सीमा शुल्क के तहत संग्रहित कर की ज्यादा राशि के प्रभाव को बेअसर कर दिया। तथापि, सरकार ने दोहराया है कि एफआरबीएम के अंतर्गत निर्धारित घाटे के लक्ष्यों को वर्ष के दौरान राजस्व और खर्चों को समायोजित कर हासिल किया जायेगा।

राजस्व व्यय में तेज गिरावट और करेतर प्राप्तियों में मंदी के कारण राजकोषीय अधिकार देने में गहनता लाने का कार्य कर राजस्व में सुधार होने में निहित है। इस संदर्भ में सकल कर-जीडीपी अनुपात की गिरती हुई प्रवृत्ति स्वागत योग्य है। केंद्र का सकल कर / जीडीपी अनुपात 2001-02 में 8.2 प्रतिशत तक कम होने के बाद बढ़कर 11.2 प्रतिशत हो गया जो कि 1990-91 के बाद का सर्वोच्च स्तर है। बढ़त की इस प्रवृत्ति को कर आधार बढ़ाकर और कर छूट को कम करके और व्यापक बनाने की आवश्यकता है। एफ आर बी एम की लक्ष्यपूर्ति के लिए 2007-08 और 2008-09 में घाटे में पर्याप्त कमी करने की आवश्यकता होगी। रिज़र्व बैंक ने अपनी अद्यतन वार्षिक रिपोर्ट में टिप्पणी की है कि राजकोषीय घाटे और राजस्व घाटे के संबंध में एफ आर बी एम लक्ष्यों का अनुपालन समष्टि आर्थिक, वित्तीय, बाह्य क्षेत्र और बजटीय मजबूती के लिए आवश्यक है। राजस्व घाटा समाप्त करके पर्याप्त राजस्व अधिशेष उभारना आवश्यक है जो देयता उभरे बिना आस्ति निर्माण के लिए उपयोग में लाया जाएगा। एफआरबीएम लक्ष्य की प्राप्ति में किसी भी कमी से एफआरबीएम के प्रारंभिक वर्षों में प्राप्त सफलता प्रभावित हो सकती है। इसका राज्य स्तर पर भी श्रृंखला प्रभाव हो सकता है जिससे राज्यों के राजकोषीय जवाबदेही विधान में निर्धारित लक्ष्य शिथिल हो सकते हैं। एफआरबीएम लक्ष्यों से किसी भी प्रकार के विचलन से राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर विश्वसनीयता प्रभावित होगी।

केंद्र के जैसा ही राज्यों को भी राजकोषीय अधिकार देने पर ध्यान केंद्रित करना होगा अर्थात् बजट में राजस्व प्रवाह का स्कोप और मात्रा बढ़ानी होगी। विशेष रूप से, उपयुक्त यूजर चार्जेस और राज्य सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों को पुनर्गठित करके करेतर राजस्व बढ़ाने का महत्व निरंतर बना हुआ है। तथापि, उच्च यूजर चार्जेस तब तक व्यवहार्य नहीं होंगे जब तक राज्यों द्वारा उपलब्ध कराई गई सेवाओं की प्रदानगी प्रभावी नहीं होगी। अतः सार्वजनिक सेवाओं की प्रदानगी में सुधार लाना राज्य सरकारों की प्राथमिकता होनी चाहिए।

कर संग्रह में सुधार पर केंद्रित विभिन्न उपायों से सरकारी क्षेत्र का राजस्व घाटा कम होने की अपेक्षा है। सार्वजनिक और निजी दोनों क्षेत्रों द्वारा निवेश के लिए अधिक संसाधन जारी करने की दृष्टि से संयुक्त राजस्व घाटा शून्य तक नीचे लाना होगा।

सार्वजनिक सेवाओं की प्रदानगी

बुनियादी सुविधाओं की भारी आवश्यकता और ऐसी परियोजनाओं के सार्वजनिक लोकप्रिय स्वरूप को देखते हुए बुनियादी सुविधाओं के प्रावधान में सार्वजनिक क्षेत्र की महत्वपूर्ण उपस्थिति हमेशा बनी रहेगी। इस प्रकार, रोड, शहरी बुनियादी सुविधाएं (जल आपूर्ति, सिवरेज, सार्वजनिक प्रकाश व्यवस्था और शहरी परिवहन), रेलवे और बंदरगाह तथा हवाई अड्डों जैसी बुनियादी सुविधाओं की परियोजनाओं का निधीयन सार्वजनिक क्षेत्र की निधि से करना जारी रखने की आवश्यकता होगी, यद्यपि कुछ मामलों में रेलवे जैसे क्षेत्रों में निजी क्षेत्र के लिए स्कोप है। इसके लिए सार्वजनिक सेवाओं की प्रदानगी में सुधार पर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है।